IAS

GS World

Committed to Excellence

PCS

दैनिक भास्कर

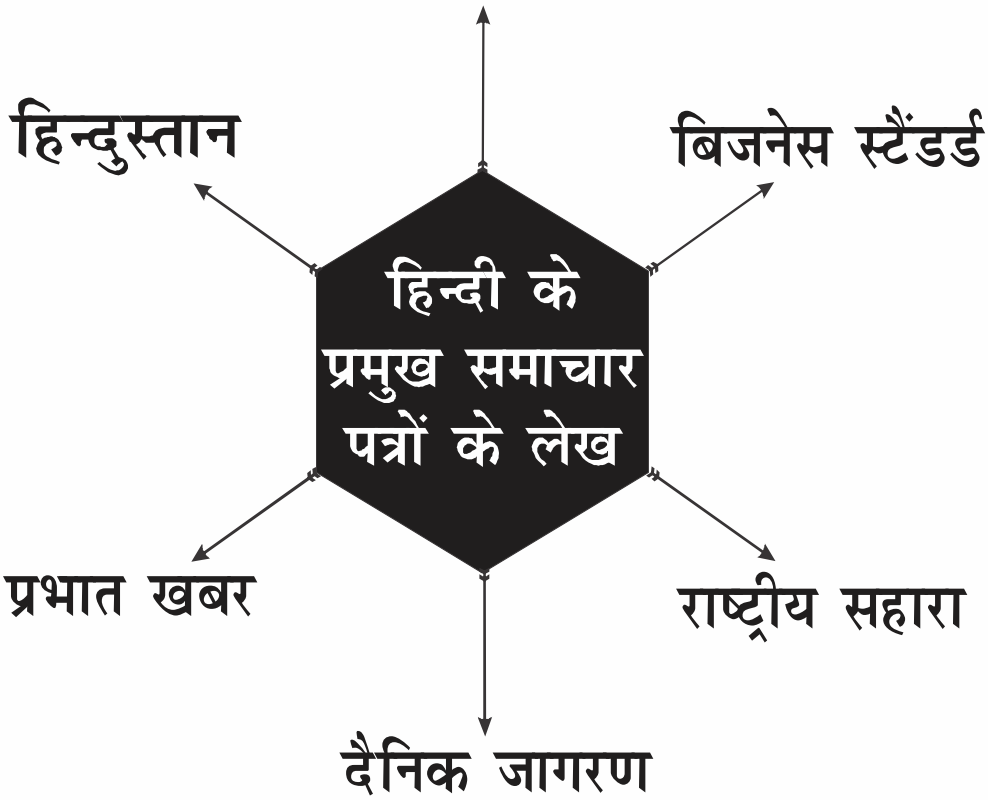

संदर्भित सार एवं संभावित प्रश्नों सहित

(28 अगस्त - 09 सितंबर, 2017)

-: Head Office:-

705, 2nd Floor, Main Road, Dr. Mukherjee Nagar, DELHI-110009

Ph. : 011-27658013, 7042772062/63

समान नागरिक संहिता का सही समय

साभार: दैनिक जागरण
(28 अगस्त, 2017)

संजय गुप्त
(प्रधान संपादक एवं लेखक, दैनिक जागरण)

सार

इस लेख में लेखक ने सर्वोच्च न्यायालय के तीन तलाक पर आए निर्णय को आगे बढ़ाते हुए समान नागरिक संहिता तक ले जाने की आवश्यकता बताई है।

विशेष- यह लेख सामान्य अध्ययन प्रश्न पत्र-II (भारतीय राजव्यवस्था) के लिए महत्वपूर्ण है।

सुप्रीम कोर्ट ने एक बार में तीन तलाक को असंवैधानिक ठहराकर मुस्लिम समाज में प्रचलित सदियों पुरानी एक कुप्रथा का अंत करने का काम किया है। इस बड़े और व्यापक असर वाले फैसले का श्रेय सुप्रीम कोर्ट को ही जाता है, लेकिन कहीं न कहीं इस निर्णय के पीछे केंद्र सरकार और विशेष रूप से प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी की भी भूमिका है, जिन्होंने खुलकर मुस्लिम महिलाओं के पक्ष में आवाज बुलंद की। यह फैसला मुस्लिम महिलाओं के संघर्ष की एक शानदार जीत भी है। इस मामले की सुनवाई कर रही पांच सदस्यीय पीठ के तीन जजों ने तीन तलाक खत्म करने के फैसले को ऐतिहासिक बनाया, क्योंकि मुख्य न्यायाधीश जेएस खेहर ने तलाक खत्म करने के लिए कानून बनाने की जरूरत जताई थी। उन्होंने न केवल एक बार में तीन तलाक की प्रथा को इस्लामी रीति माना था, बल्कि पर्सनल लॉ का हिस्सा बताते हुए यह भी कहा था कि यह मौलिक अधिकार है। ऐसा ही मत एक अन्य जज का भी था। हालांकि इन दोनों जजों की राय का फैसले पर असर नहीं पड़ा, लेकिन उनके नजरिये ने कुछ सवाल तो खड़े ही कर दिए हैं। इन दो जजों के विपरीत तीन जजों ने यह पाया कि एक बार में तीन तलाक की प्रथा का कुरान में कोई स्थान नहीं और इसीलिए वह खारिज करने योग्य है। यह प्रथा एक कुप्रथा में तब्दील हो गई थी और उसका जमकर दुरुपयोग भी हो रहा था। स्थिति यह थी कि चिट्ठी, फोन और यहां तक कि वाट्सएप से भी तलाक दिया जाने लगा था।

आज का समाज जिस तेजी से आगे बढ़ और बदल रहा है उसमें किसी भी वजह से महिलाओं की दोयम दर्जे की स्थिति स्वीकार नहीं की जा सकती। यह हैरत की बात है कि तमाम इस्लामी देशों ने तो एक बार में तीन तलाक से आजादी पा ली, लेकिन भारत में मुस्लिमों का एक बड़ा हिस्सा पर्सनल लॉ के नाम पर इस कुप्रथा को त्यागने के लिए तैयार नहीं था। अभी भी वह इसे अपनी जीत बता रहा है कि सुप्रीम कोर्ट ने पर्सनल लॉ में हेरफेर करने की इजाजत नहीं दी है। ब्रिटिश शासन के दौरान सामाजिक रीति रिवाज बदलने के लिए अंग्रेजों ने भारत में विवाह संबंधी कुरीतियां समाप्त करने का मन बनाया था। उन्होंने हिंदू समाज के कानूनों में तो बदलाव की पहल की, लेकिन मुस्लिम समाज के कानूनों की इसलिए अनदेखी की ताकि मुसलमान उनके खिलाफ न हो जाएं। जब भारत को आजादी मिली तो हिंदुओं के पर्सनल लॉ में बदलाव के लिए हिंदू कोड बिल लाया गया, लेकिन जब मुसलमानों के पर्सनल लॉ में बदलाव का सवाल उठा तो नेहरू पीछे हट गए। इसके बाद जब भारतीय राजनेताओं को यह समझ आ गया कि वे मुस्लिम वोट बैंक की राजनीति कर अपना फायदा कर सकते हैं तो उनमें इस समाज के तुष्टीकरण की होड़ लग गई। इस होड़ की पराकाष्ठा शाहबानो मामले में देखने को मिली। 1985 में तलाक के एक मामले में सुप्रीम कोर्ट ने शाहबानो के पक्ष में फैसला देकर उन्हें गुजारा भत्ता देने का आदेश दिया, लेकिन राजीव गांधी सरकार ने अपने प्रचंड बहुमत के चलते 1986 में एक नए कानून का निर्माण कर सुप्रीम कोर्ट के फैसले को पलट दिया। बहुमत की मनमानी वाले इस फैसले के विरोध में आरिफ मोहम्मद खान ने मंत्रिपरिषद से इस्तीफा भी दिया, लेकिन सरकार के रवैये पर असर नहीं पड़ा। कांग्रेस की इस भूल को एक तरह से भाजपा ने सुधारा और उसने तीन तलाक के मामले में मुस्लिम महिलाओं का पक्ष लिया।

अब जब सुप्रीम कोर्ट ने तीन तलाक को असंवैधानिक ठहरा दिया है तब करीब-करीब सभी राजनीतिक दल उसका स्वागत तो कर रहे हैं, लेकिन कुछ दल अभी भी मुस्लिम तुष्टीकरण वाली राजनीति का मोह छोड़ने के लिए तैयार नहीं दिख रहे और इसीलिए वे समान नागरिक संहिता की जरूरत पर मौन हैं। समान नागरिक संहिता के मामले में भाजपा का रुख नया नहीं है। वह जनसंघ के समय से ही समान नागरिक संहिता की वकालत करती आ रही है। समान नागरिक संहिता का अर्थ यही है कि देश के सभी नागरिकों को, वे चाहे किसी भी मजहब, जाति या क्षेत्र के हों, के लिए विवाह, उत्तराधिकार आदि के मामले

में एक समान पर्सनल लॉ बनें। मुस्लिम समाज को यह समझने की जरूरत है कि उनके अपने समाज में वक्त के साथ परिवर्तन होना चाहिए। वे अपने पर्सनल लॉ की आड़ में रूढ़ियों को अनंतकाल तक ढोते नहीं रह सकते। जब दूसरे समुदाय के पसर्नल लॉ बदले जा चुके हैं तो फिर यही काम मुस्लिम पर्सनल लॉ के मामले में क्यों नहीं हो सकता? कोई समाज सदियों पुराने रीति-रिवाजों के साथ आगे नहीं बढ़ सकता? आखिर जो समाज अपनी आधी आबादी यानी महिलाओं की लगातार उपेक्षा करे वह प्रगति कैसे कर सकता है? यह एक तथ्य है कि अन्य समाजों की अपेक्षा मुस्लिम समाज में महिलाएं अधिक शोषण की शिकार हैं।

सुप्रीम कोर्ट ने फिलहाल एक साथ तीन तलाक के मामले में अपना फैसला सुनाया है। उसने इस मामले की सुनवाई शुरू करते ही यह स्पष्ट कर दिया था कि बहुविवाह और निकाह हलाला जैसे विषयों पर बाद में सुनवाई होगी। इसके बाद भी उसके फैसले ने मुस्लिम समाज में महिलाओं की स्थिति को लेकर बहस शुरू की है। अच्छा हो कि मुस्लिम समाज बहुविवाह और निकाह हलाला पर भी खुले मन से विचार-विमर्श करे। यह स्वाभाविक है कि इस विमर्श में समान नागरिक संहिता का मुद्दा स्वत: शामिल हो जाएगा। वैसे भी यह माना जा रहा है कि समान नागरिक संहिता पर विधि आयोग की रपट आने के बाद मोदी सरकार इस दिशा में कदम उठाएगी। उसे ऐसे कदम उठाने भी चाहिए, लेकिन उसके ऐसा करने की स्थिति में इसका अंदेशा है कि मुस्लिम समाज के धर्मगुरु और पर्सनल लॉ बोर्ड जैसे संगठन विरोध कर सकते हैं। जमात ए इस्लामी तो तीन तलाक पर सुप्रीम कोर्ट के फैसले का विरोध अभी भी कर रहा है। उसके जैसे संगठन यह भी दलील दे रहे हैं कि बहुविवाह और निकाह हलाला उनके धर्म का हिस्सा हैं। वे यह समझने के लिए तैयार नहीं कि धर्म आधारित कानून भी इंसान ही बनाते हैं और अगर बदलते सामाजिक परिवेश के साथ पुरुषों और महिलाओं को बराबर का अधिकार न देने वाले कानूनों को बदला नहीं जाएगा तो फिर उनका समाज पिछड़ेपन से मुक्त कैसे हो सकता है? समान नागरिक संहिता देश के नागरिकों को समान अधिकार देने के साथ ही सामाजिक एकता को मजबूत करने का भी काम करेगी। वह सबमें बराबरी का भाव भी पैदा करेगी। अच्छा होता कि सुप्रीम कोर्ट ऐसा कुछ कहता कि मुस्लिम पर्सनल लॉ में बदलाव हो सकते हैं।

समान नागरिक संहिता के मामले में यह ध्यान रहे कि इसकी आवश्यकता संविधान निर्माताओं ने भी जताई थी। किसी भी देश के लिए उसका संविधान सर्वोपरि होता है और उससे जो मौलिक अधिकार मिलते हैं उनके जरिये अलग-अलग समाजों के लिए स्वीकार्य साझा पर्सनल लॉ बनाया जा सकता है। आखिर जब दुनिया के अन्य देशों में यह काम हो सकता है यानी समान नागरिक संहिता बन सकती है तो फिर भारत में क्यों नहीं बन सकती?

संभावित प्रश्न

तलाक-ए-विद्दत पर आये सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय की व्यावहारिक सफलता तभी मिल सकेगी जब इसे समान नागरिक संहिता के लक्ष्य तक पहुंचाया जाये। इस कथन का आलोचनात्मक परीक्षण करें।

सीधे किसान को सब्सिडी बेहतर विकल्प

साभार: दैनिक ट्रिब्यूनल
(29 अगस्त, 2017)

भरत झुनझुनवाला

सार

इस लेख में लेखक ने भारत में मौजूद सब्सिडी व्यवस्था की अलोचना की है तथा प्रधानमंत्री मोदी के किसानों की आय को दो गुना करने हेतु किये गए निश्चय को पूर्ण करने के लिए किसानों को प्रत्यक्ष सब्सिडी के विकल्प को ही बेहतर बता रहे हैं।

विशेष- यह लेख सामान्य अध्ययन प्रश्न पत्र-III (अर्थव्यवस्था) के लिए महत्वपूर्ण है।

प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी ने आने वाले 5 वर्षों में किसानों की आय को दो गुणा करने का आश्वासन दिया है। इस चुनौती का सफल समाधान संभव है यदि सरकार सही पॉलिसी अपनाए। अब तक सरकार का प्रयास रहा है कि कृषि उत्पादन बढ़ाकर किसान की आय में वृद्धि हासिल की जाए। जैसे सरकार चाहती है कि हर खेत को पानी मिले, जिससे किसान द्वारा अधिक उत्पादन किया जा सके। अथवा बीते समय में सरकार ने 'सायल हेल्थ कार्ड' योजना को आरंभ किया था। सोच थी कि किसान की भूमि की मुफ्त जांच कराई जाएगी और उसे बताया जाएगा कि उसके खेत को किस फर्टिलाइजर की जरूरत है। जैसे किसी खेत को जरूरत पोटाश की है परन्तु किसान यूरिया डाल रहा हो तो लागत बढ़ेगी परन्तु उत्पादन नहीं बढ़ेगा। किसान सही फर्टिलाइजर का उपयोग करेगा तो उत्पादन बढ़ेगा और उसका लाभ भी। यही नीति सरकार द्वारा पिछले 70 वर्षों से लागू की जा रही है। इस नीति का लाभ भी हुआ है। साठ के दशक में हम अपना पेट नहीं भर पा रहे थे और हमने अमेरिका से गेहूं भिक्षा में प्राप्त किया था। आज हम कभी-कभी उत्पादन अधिक होने से निर्यात कर रहे हैं।

लेकिन उत्पादन में भारी वृद्धि से किसान की आय में कम ही वृद्धि हुई है। किसान के बेटे-बेटियों का शहर को पलायन निरंतर जारी है। किसानों द्वारा आत्महत्याओं का सिलसिला भी रुक नहीं रहा है। इसीलिये प्रधानमंत्री को यह कहने की जरूरत पड़ी है कि अगले 5 वर्षों में किसानों की आय को दो गुणा किया जाएगा। पुरानी चाल को देखें तो यह कार्य कठिन दिखता है। कारण कि उत्पादन में वृद्धि के साथ-साथ बाजार में कृषि उत्पादों के दाम गिर जाते हैं और बढ़ा हुआ उत्पादन किसान के लिए अभिशाप बन जाता है। जैसे पिछले साल देश में आलू की बम्बर फसल हुई। मंडियों में आलू 2-3 रुपए प्रति किलो बिक रहा था। किसान के लिए आलू खोद कर मंडी तक पहुंचाने का खर्च भी वसूल करना कठिन हो गया था। किसानों ने आलू को सड़कों के किनारे फेंक दिया था।

इस दुरूह परिस्थिति के दो कारण हैं। पहला कारण है कि विश्व बाजार में कृषि उत्पादों के दाम गिर रहे हैं। सामान्य वस्तुओं जैसे कार अथवा कपड़े के दामों में वृद्धि ज्यादा एवं तुलना में कृषि उत्पादों के दामों में वृद्धि कम हुई है। सामान्य वस्तुओं की तुलना में कृषि उत्पादों के दाम गिर रहे हैं। जैसे एक मीटर साधारण कपड़े के बदले पूर्व में आधा किलो गेहूं मिलता था तो आज उसी कपड़े के बदले एक किलो गेहूं मिल रहा है। कृषि उत्पादों के दाम में यह गिरावट वैश्विक है।

सम्पूर्ण विश्व में कृषि तकनीकों में भारी सुधार हुआ है जैसे उन्नत किस्मों का आविष्कार हुआ है, फसलों को माइक्रोन्यूट्रिएन्ट देने एवं सघन पौधारोपण की जानकारी मिली है तथा सिंचाई का विस्तार हुआ है वहीं विश्व की जनसंख्या में वृद्धि कम ही हुई है। इसलिए खाद्यान्न की खपत में वृद्धि कम हुई है। उत्पादन में ज्यादा एवं खपत में कम वृद्धि होने से विश्व बाजार में सप्लाई की तुलना में डिमान्ड कम बढ़ी है और दाम गिर रहे हैं। विश्व व्यापार संगठन के अंतर्गत हम विश्व बाजार से जुड़ चुके हैं, इसलिए हमारे किसानों को भी कृषि उत्पादों के दाम कम मिल रहे हैं। इसलिए उत्पादन में वृद्धि और आय में गिरावट साथ-साथ चल रहे हैं।

किसानों की दुरूह परिस्थिति का दूसरा कारण सरकार की आयात-निर्यात नीति है। सरकार की दृष्टि शहरी उपभोक्ताओं के वोटों पर ज्यादा रहती है। देश के वोटरों में इनका हिस्सा 60 से 70 प्रतिशत है। इसलिए जब देश में कृषि उत्पादन कम होता है और घरेलू बाजार में दाम बढ़ने को होते हैं तो सरकार आयात करती है, दाम को बढ़ने नहीं देती और किसान को घरेलू दाम में वृद्धि से लाभ कमाने के अवसर से वंचित कर देती है। दूसरी तरफ जब देश में कृषि उत्पादन अधिक होता है और घरेलू दाम न्यून होते हैं तो निर्यातों पर प्रतिबंध लगाकर किसान को विश्व बाजार में ऊंचे मूल्यों का लाभ कमाने से वंचित कर देती है। इस प्रकार सरकार सुनिश्चित कर रही है कि किसान की आय न्यून बनी रहे।

ऐसे में उत्पादन बढ़ाकर किसान की आय को दो गुणा करने की सरकार की रणनीति फेल होगी चूंकि विश्व बाजार में कृषि उत्पादों के दामों में गिरावट के कारण बढ़ा हुआ उत्पादन किसान के लिए अभिशाप बन जाएगा।

सरकार को नीति परिवर्तन करना चाहिए। आज हमारे किसान नकद फसलों के उत्पादन में पानी का अधिकाधिक उपयोग कर रहे हैं। दक्षिण में मलबरी, विन्ध्य के पठार में कपास तथा केला, राजस्थान में लाल मिर्च और उत्तर में गन्ना और मेन्था के उत्पादन में पानी का भारी उपयोग हो रहा है। इन्हीं फसलों के उत्पादन के लिए किसानों द्वारा ऋण लिए जा रहे हैं और रिपेमेंट न कर पाने की स्थिति में आत्महत्याएं की जा रही हैं।

सरकार को चाहिए कि सिंचाई के पानी की मात्रा के अनुसार किसान से पानी का मूल्य वसूल करे। इन फसलों पर गुड्स एण्ड सर्विस टैक्स भी लगाया जा सकता है। ऐसा करने से किसान इन फसलों का उत्पादन कम करेगा और सरकार को राजस्व मिलेगा। ध्यान दें कि नकद फसलों पर टैक्स लगाने से हमारी खाद्य सुरक्षा पर दुष्प्रभाव नहीं पड़ेगा, चूंकि गेहूं और आलू की खेती में पानी तुलना में कम लगता है और इन फसलों पर जीएसटी भी नहीं लगेगा।

साथ-साथ देश के हर किसान को एक निर्धारित रकम हर वर्ष नकद देनी चाहिए, जैसे एलपीजी सब्सिडी को उसके खाते में डाला जा रहा है। जितनी रकम सरकार द्वारा पानी के मूल्य एवं नकद फसलों पर जीएसटी से वसूल की जाए, उससे ज्यादा रकम किसानों को सीधे सब्सिडी के रूप में दी जाए। तब किसान पर अतिरिक्त बोझ नहीं पड़ेगा। एक तरफ उससे रकम वसूल की जाएगी तो दूसरी तरफ ज्यादा रकम सब्सिडी के रूप में मिल जाएगी।

इस व्यवस्था के कई लाभ होंगे। पहला लाभ कि किसान को एक निर्धारित रकम उसके खाते में मिल जाएगी, जिससे वह अपनी न्यूनतम जरूरतों को पूरी कर सकेगा और आत्महत्या करने को मजबूर नहीं होगा। व्यवस्था बनाई जा सकती है कि इस रकम पर बैंकों अथवा साहूकारों द्वारा कब्जा नहीं किया जा सकेगा। दूसरा लाभ होगा कि विश्व बाजार में कृषि उत्पादों के दामों में गिरावट की स्थिति में भी किसान सुरक्षित रहेगा। यदि दाम ज्यादा गिरते हैं तो किसान भूमि को परती छोड़ देगा, चूंकि उसे नकद सब्सिडी तो मिल ही रही होगी।

तीसरा लाभ होगा कि हमारी खाद्य सुरक्षा सुनिश्चित होगी। नकद फसलों का उत्पादन कम होगा और भूमिगत पानी की उपलब्धता बढ़ेगी। हमारे किसान इस पानी का उपयोग आलू एवं गेहूं के उत्पादन के लिए कर सकेंगे और हमारी खाद्य सुरक्षा स्थापित होगी। जाहिर है उत्पादन बढ़ाने की वर्तमान नीति से किसान की आय निश्चित रूप से दो गुणा नहीं होगी। किसान की आय बढ़ाने का हल उत्पादन घटा कर एवं क्षेत्रवार नकद देकर निकलेगा।

संभावित प्रश्न

यदि किसानों की आय को 2022 तक दोगुना करना है तो भारत में मौजूद कृषि सब्सिडी प्रणाली को तर्कसंगत बनाना होगा। इस कथन से आप कहां तक सहमत हैं? चर्चा करें

तीन तलाक पर कमजोर फैसला

साभार : प्रभात खबर
(30 अगस्त, 2017)

प्रो योगेंद्र यादव
(राष्ट्रीय अध्यक्ष, स्वराज इंडिया)

सार

इस लेख में लेखक ने सर्वोच्च न्यायालय के तीन तलाक पर दिए गए निर्णय के आलोचनात्मक पक्ष को दर्शाया है तथा उन आधारों की भी चर्चा की है जिनके आधार पर इस निर्णय को कमजोर कहा जा रहा है।

विशेष- यह लेख सामान्य अध्ययन प्रश्न पत्र-II (भारतीय राजव्यवस्था) के लिए महत्वपूर्ण है।

तीन तलाक की प्रथा मानवीयता, संविधान और इस्लाम तीनों के विरुद्ध है। देर-सवेर तीन तलाक को खारिज होना ही था, सो हो गया। लेकिन, मुझे इस फैसले से तीन बड़ी उम्मीदें थीं। एक, इससे तीन तलाक ही नहीं, देश में तमाम महिला विरोधी धार्मिक-सामाजिक कुरीतियों को अमान्य करने का रास्ता खुलेगा। दो, इस बहाने मुस्लिम समाज में सुधार होगा और मुस्लिम अपने कठमुल्ला नेतृत्व से मुक्त होंगे। तीन, कानूनी धक्के से सेक्युलर राजनीति अपने पाखंड से मुक्त होगी। लेकिन, इस फैसले से एक उम्मीद भी पूरी नहीं होती।

एक ही सांस में तलाक-तलाक-तलाक कहकर संबंध विच्छेद करने की घटनाएं इनि-गिनी ही होती हैं। फिर भी शादी तोड़ने का इतना अतार्किक और अमानवीय तरीका इस प्रथा को एक महत्वपूर्ण मुद्दा बनाता है।

व्यवहार में यह हो या न हो, इसका डर एक औरत के सर पर तलवार की तरह लटका रहता है। वैसे मुस्लिम समाज में इस प्रथा को अच्छी निगाह से नहीं देखा जाता। कुरान में तलाक के इस स्वरूप का कहीं जिक्र नहीं है। शरिया ने इसे वैधता जरूर दी, लेकिन एक आदर्श के रूप में नहीं। ऐसी नारी विरोधी प्रथा हमारे संविधान की मूल भावना के खिलाफ है। इसलिए कभी न कभी इस प्रथा को कानूनी रूप से अवैध घोषित होना ही था।

इस लिहाज से सुप्रीम कोर्ट की संविधान पीठ का फैसला बहुत कमजोर फैसला है। उम्मीद थी कि सुप्रीम कोर्ट एक राय से बुलंद आवाज में बोलेगा, लेकिन फैसला सिर्फ तीन-दो के बहुमत से आया। जिन तीन जजों ने इस प्रथा को गैरकानूनी बताया, वो भी असमंजस का शिकार दिखे।

सिर्फ दो जजों, जस्टिस नारीमन और जस्टिस ललित, ने कहा कि संविधान प्रदत्त मौलिक अधिकारों का उल्लंघन करनेवाले पारिवारिक कानून और प्रथाएं गैरकानूनी मानी जायेंगी। बाकी तीन जजों ने कहा कि शादी और तलाक के अलग-अलग धर्म के कानूनों को संविधान के मौलिक अधिकार की कसौटी पर नहीं कसा जा सकता। संयोग से उनमें से एक जज (जस्टिस जोसेफ) ने तीन तलाक को इस आधार पर अवैध माना कि वह कुरान शरीफ के अनुसार नहीं है।

अगर जस्टिस जोसेफ भी जस्टिस खेहर और जस्टिस नजीर का यह तर्क मान लेते कि तीन तलाक एक पुरानी और मान्य प्रथा है, तो सुप्रीम कोर्ट का फैसला पलट जाता। इसीलिए यह सामजिक सुधार के लिए कोई बड़ी जीत नहीं है। एक मायने में इस फैसले ने नारी विरोधी सामाजिक प्रथा के खिलाफ कानूनी लड़ाई को पहले से भी मुश्किल बना दिया है। तीन तलाक तो अवैध हो गया, लेकिन सभी धर्मों में ऐसी अनेक महिला विरोधी प्रथाएं हैं, जिन्हें रोकना जरूरी है।

आशा की किरण दिखाने के बावजूद सुप्रीम कोर्ट का फैसला इन सबके विरुद्ध संघर्ष करनेवालों को सहारा नहीं देता।

यह फैसला मुस्लिम समाज और उसके नेतृत्व में जरूरी बदलाव की शुरुआत भी नहीं करता। आज भारत के मुसलमान की सबसे बड़ी समस्या उनके धार्मिक अधिकार नहीं है। आज एक औसत मुसलमान अच्छी शिक्षा के अवसरों से वंचित है, नौकरी में भेदभाव का शिकार है और शहरों में भी मुस्लिम इलाकों में रहने को अभिशप्त है। आज से ग्यारह साल पहले सच्चर समिति ने इस सच्चाई की ओर हमारी आंखें खोली थी।

लेकिन, मुस्लिम समाज का कठमुल्ला नेतृत्व इन सवालों को उठाने की बजाय सिर्फ ऐसे धार्मिक और सांस्कृतिक पहचान के सवालों को उठाता है, जिससे औसत मुसलमान की भावनाओं को भड़काया जा सके। तीन तलाक जैसी कुप्रथा का समर्थन करना मुस्लिम नेतृत्व के दिवालियेपन का सबूत है।

आज के माहौल में मुस्लिम समुदाय से इस नेतृत्व को चुनौती देने की उम्मीद करना मुश्किल है। आज एक औसत मुसलमान दहशत में जी रहा है।

एक खौफजदा समाज से अपनी गिरेबां में झांकने और नेतृत्व को चुनौती देने की उम्मीद नहीं की जा सकती। सुप्रीम कोर्ट के फैसले से इस मामले में कोई मदद नहीं मिलती। जब सुप्रीम कोर्ट के इस फैसले के पक्ष में नरेंद्र मोदी बोलते हैं और अमित शाह प्रेस कॉन्फ्रेंस करते हैं, तो एक साधारण मुसलमान के मन मे शक और डर पैदा हो जाता है। बस इतना जरूर हुआ है कि स्वर्गीय हमीद दलवई के नेतृत्व में शुरू हुए संघर्ष और भारतीय मुस्लिम महिला आंदोलन जैसे हिम्मती संगठनों को कुछ ताकत मिल गयी है। इसी से कुछ उम्मीद बनती है।

क्या सुप्रीम कोर्ट का यह फैसला देश की सेक्युलर राजनीति का चरित्र बदलेगा? अगर सुप्रीम कोर्ट बुलंद आवाज में कहता कि संवैधानिक मूल्यों के खिलाफ कोई सामाजिक धार्मिक प्रथा मान्य नहीं होगी, तो सेक्युलर राजनीति की हिम्मत भी बढ़ती। लेकिन, अगर कोर्ट की चारदीवारी में सुरक्षित जज भी असमंजस में हैं, तो सड़क पर वोट ढूंढते राजनेता से क्या उम्मीद की जाये? फिर भी एक उम्मीद बनती है, क्योंकि लकीर के फकीर बने रहने के बजाय ज्यादातर 'सेक्युलर' पार्टियों ने इस फैसले का समर्थन किया है।

यहां गौरतलब है कि इस फैसले से पहले इन अधिकतर पार्टियों ने खुलकर तीन तलाक के खिलाफ बोलने की हिम्मत नहीं दिखायी थी। सच यह है कि ये पार्टियां मुस्लिम वोट के लालच में कठमुल्ला मुस्लिम नेतृत्व की गिरफ्त में रही हैं। तीस साल पहले शाहबानो वाले मामले में घुटने टेक देनेवाली यह राजनीति का रुख शायरबानो के इस नवीनतम मामले में कुछ सुधरा तो है। यही एक छोटी सी आशा है।

संभावित प्रश्न

सर्वोच्च न्यायालय के तीन तलाक पर आये निर्णय के सकारात्मक पहलू के साथ-साथ कुछ नकारात्मक पक्ष भी है। इस कथन का विश्लेषण करें।

मुम्बई ही नहीं, हर शहर को चाहिए बेहतर ढांचा

साभार: दैनिक भास्कर
(31 अगस्त, 2017)

चेतन भगत

सार

इस लेख में लेखक ने मुंबई में हुई बारिस तथा उसके बाद पूरे शहर के समक्ष उत्पन्न हुई चुनौतियों के संदर्भ में पूरे देश के नगरों के लिए इस प्रकार की आपदा से निपटने हेतु आवश्यक अवसंरचना सुधारों की चर्चा की है।

विशेष- यह लेख सामान्य अध्ययन प्रश्न पत्र-I (शहरीकरण संबंधी मुद्दे) के लिए महत्वपूर्ण है।

सबसे पहले तो नेशनल कॉलम में मुंबई के बारे में लिखने के लिए माफी चाहता हूं। मुंबई भारत का सिर्फ एक शहर है। लेकिन, यह राष्ट्र की वित्तीय एवं व्यावसायिक राजधानी भी है। इस शहर की सेहत का शेष देश पर असर पड़ता है। इस हफ्ते दुनिया ने मौसम के कारण मुंबई को बिखरते देखा। मंगलवार को मुंबई में 24 घंटे के दौरान 30 सेंटीमीटर बारिश हुई। मुंबई में 225 सेंटीमीटर सालाना बारिश के औसत का आठवां हिस्सा एक ही दिन में गिर गया। महानगर में 2005 में एक ही दिन में 90 सेंटीमीटर बारिश हुई थी उसके बावजूद मंगलवार को हुई बारिश बहुत ज्यादा थी। फिर भी यह कोई ऐसी बारिश नहीं थी कि शहर एकदम ठप हो जाए। पटरियां डूबने के कारण स्थानीय ट्रेनें रुक गईं। सड़कों पर पानी भरने से टैक्सी, ओला, उबर जैसे एग्रीगैटर कैब और ऑटोरिक्शा भी नहीं चले। कई स्कूली बच्चे रातभर स्कूल में ही सोए। स्थानीय ट्रेन स्टेशनों पर फंसे यात्रियों ने बेकार पड़ी बोगियों घंटों वक्त गुजारा। सूखे बचे रहने के लिए उनके लिए यही एकमात्र जगह थी।

रिस्पॉन्स हमेशा की शैली का था। सुबह की शुरुआत उस दृश्य की तारीफ से शुरू हुई, जिसे मुंबई की बारिश कहते हैं। दोपहर आते-आते सोशल मीडिया में जल-जमाव की तस्वीरों का सैलाब आ गया। कुछ घंटों बाद बारिश का बहादुरी से सामना करते हुए घर लौटते लोगों की खबरें थीं, 'मुंबई की अदम्य भावना' (जैसे घर जाने वाले व्यक्ति के लिए दूसरा विकल्प भी था!) फिर करुणा की खबरें आने लगीं कि कैसे मुंबईकर बारिश के कारण फंस गए लोगों को गरमागरम चाय पिला रहे थे, उन्हें घर में शरण दे रहे थे। रात को न्यूज चौनलों की बहस में लोग एक-दूसरे पर चिल्ला रहे थे जैसे चीखने से बादल चले जाएंगे। किसी ने कोई समाधान नहीं दिया। कोई जानता नहीं था कि स्थिति बदलेगी कैसे। खिली हुई धूप वाले दिनों में भी खटारा आधारभूत ढांचे वाले मुंबई शहर के लिए सबसे बड़ी उम्मीद तो यही होती है कि ईश्वर करुणा करेगा। हां हम ऐसे महानगर में हैं, जो राम भरोसे हैं। हमारे यहां चाहे खरबों डॉलर की बाजार पूंजी वाले शेयर बाजार हैं, चाहे अरबों डॉलर के बजट वाली महानगरपालिका है, लेकिन, कुछ घंटे की बारिश सबकुछ ध्वस्त कर देती है।

दुनिया में दूसरा ऐसा कोई शहर नहीं है, जो देश की वित्तीय राजधानी है और वहां इतना दयनीय बुनियादी ढांचा हो। लोकल ट्रेन तो आम दिनों में भी दयनीय नजर आती हैं। मुंबई की सड़कों का वैसे ही घटिया तरीके से बनाना जारी है। उनकी मरम्मत ऐसी सामग्री से होती है, जो मौसम की एक मार भी नहीं झेल पाती। अधिकारियों को रत्तीभर परवाह नहीं है। महाराष्ट्र की तुलना में मुंबई के वोटों का प्रतिशत बहुत ही कम है। हाईप्रोफाइल शहर को उतना इसका राजनीतिक प्रभाव नहीं है। इसमें उन लोगों की बेपरवाही या उदासनीता को जोड़ लें, जो उनके धर्म या गुरु के आहत होने पर लाखों की संख्या में इकट्ठे हो जाते हैं पर, ऐसा वह शहर बदलने के लिए नहीं करेंगे। यदि सिर्फ एक दिन मुंबईकर गुस्से में भरकर सड़कों पर आ जाएं और मांग करें कि 'मेरे शहर को ठीक करें' तो अधिकारी उठ खड़े होंगे और समस्याओं पर ध्यान देंगे। हम ऐसा कुछ नहीं करते । इस बीच मैं यहां दो सुझाव देना चाहूंगा, जो न सिर्फ मुबंई की बल्कि अन्य शहरों के भी काम में आ सकते हैं। पहला बहुत आसान है और जितनी जल्दी हो सके इसे लागू करना चाहिए। दूसरा सुझाव जरा कठिन है लेकिन समस्या को सच्चे अर्थों में सुलझा देगा। यह अधिकारियों पर है कि वे इसे अमल में लाएं और नागरिक इसके लिए दबाव बनाएं। एक, हम तत्काल मौसम की चेतावनी देने वाली एक अच्छी प्रणाली की जरूरत है। मौसम की रिपोर्टों में यह बताने का कुछ मतलब नहीं है कि 'भारी वर्षा होने की अपेक्षा है।' वे एक्शन की बात नहीं करतीं। इस बात का कोई पैमाना होना चाहिए कि मौसम कितना खराब होने की संभावना है और प्रत्येक स्तर पर किस तरह के कदम उठाने की जरूरत होगी। उदाहरण के लिए हमारे सामने ऐसा पैमाना हो सकता है ::

सामान्य स्थिति

1. मौसम खराब हो सकता है, मौसम की खबरों पर निगाह रखें।
2. भारी बारिश/तेज हवाएं, प्राथमिक स्कूलों को बंद किया जाए।
3. बहुत तेज हवाएं/बारिश, सारे स्कूल बंद रखें जाएं, अन्य लोगों को सलाह है कि वे घर में ही रहें।
4. बहुत ही खराब मौसम। सारे स्कूल, दफ्तर, कॉलेज बंद रखे जाएं केवल अत्यावश्यक सेवाएं जारी रहें, सीमित सार्वजनिक परिवहन, घर में ही रहें।
5. पूरा शहर बंद रखा जाए।
6. यह आसान सा पैमाना प्रमुखता से प्रसारित करने से लोगों को अपनी गतिविधियों की योजना बनाने में मददगार हो सकता है और नाटकीय रूप से उनकी कठिनाइयों को घटा सकता है। मसलन, बीते मंगलवार को 4 की पैमाने की सूचना होती, 2005 में हमारे सामने 5 की स्थिति थी। बारिश के मौसम में हमारे सामने कुछ 2 और 3 की स्थितियां हो सकती हैं।

बेशक, मौसम का पूर्वानुमान लगाना कठिन है हालांकि टेक्नोलॉजी ने इसमें काफी सुधार किया है। हो सकता है कि गलत चेतावनी जारी हो जाए। लेकिन, मौजूदा समय में लोग कभी-कभार घर से भी काम कर सकते हैं। इसलिए, उत्पादकता का नुकसान न्यूनतम होगा। इस प्रकार की मौसम की चेतावनी देने वाली प्रणाली हॉन्गकॉन्ग में तूफान की चेतावनी देने वाले सिग्नल सिस्टम की तरह होगी, जो बहुत ही कुशलता से काम करती है। हॉन्गकॉन्ग में बहुत ही भारी बारिश होती है। फिर भी खराब मौसम में न तो वहां कोई परेशानी होती है और न पूरा हॉन्गकॉन्ग ठप होता है।

दूसरा सुझाव सड़कें ठीक करने का है। मुंबई में कंक्रीट की सड़कें बनानी की जरूरत हैं (ठीक वैसे जैसे विदेशों में या लुटियन्स दिल्ली के कुछ हिस्सों में होती हैं)। तारकोल का इस्तेमाल पेंट की एक कोटिंग करने से बेहतर नहीं होता। कुछ ही महीनों में यह बह जाता है और फिर गड्ढे बन जाते हैं। मुंबई की सारी नई सड़के कानूनन सीमेंट की बनाई जानी चाहिए। इसी तरह विश्वस्तरीय ड्रेनेज सिस्टम की जरूरत भी है। और हां, यह बहुत ही अच्छा होगा कि यह सब निर्माण करने वाले लोग सार्वजनिक पैसा खा न जाए।

मुंबई ने काफी भुगत लिया है। अब समय है कि हम इस तकलीफ को स्वीकार करना बंद कर दें। मौसम की चेतावनी देने का सही सिस्टम हो, अच्छी सड़कें और ड्रेनेज सिस्टम हों तो मुंबई को पंगु होने की जरूरत नहीं होगी। अब वक्त आ गया है कि हम महानगर को इससे उबारें।

संभावित प्रश्न

"पिछले कुछ वर्षों में शहरी बाढ़ की घटनाएं विशेषकर महानगरों में प्रायः दिखाई देने लगी हैं। इन समस्याओं का मुख्य कारण अनियमित शहरीकरण है।" इस कथन का विश्लेषण करें।

सरल श्रम कानूनों की दिशा में निर्णायक प्रथम कदम

साभार: दैनिक भास्कर

(1 सितंबर, 2017)

सार

इस लेख में लेखक ने श्रम सुधारों की दिशा में किये गए हाल के प्रयासों की विस्तृत चर्चा की है। मजदूरी संहिता, 2017 विधेयक के प्रमुख प्रावधानों को भी दर्शाया है।

विशेष- यह लेख सामान्य अध्ययन प्रश्न पत्र-III (भारतीय अर्थव्यवस्था) के लिए महत्वपूर्ण है।

सरकार ने बड़ी संख्या में श्रम कानूनों को सरल बनाने तथा उनके एकीकरण की दिशा में एक निर्णायक कदम उठाया जब, उसने इसे देश के समक्ष प्रस्तुत किया। मजदूरी संहिता, 2017, एक ऐसा विधेयक है जो मजदूरी से संबंधित चार वर्तमान श्रम कानूनों की विशेषताओं और प्रावधानों को जोड़ता है। यह विधेयक 10 अगस्त, 2017 को संसद के मानसून सत्र के दौरान लोक सभा में प्रस्तुत किया गया। इस संहिता का उद्देश्य चार केंद्रीय श्रम कानूनों, जिनके नाम हैं- मजदूरी भुगतान कानून, 1936; न्यूनतम मजदूरी कानून, 1948 ; बोनस भुगतान कानून, 1965 और समान पारिश्रमिक कानून, 1976 के महत्वपूर्ण प्रावधानों के एकीकरण, सरलीकरण और विवकीकरण के जरिये कर्मचारियों एवं नियोक्ताओं दोनों को ही राहत पहुंचाना है।

इस विधयेक के पारित होने के साथ ही चारों कानून निरस्त समझे जाएंगे। कानून के सरल अनुपालन को सुगम बनाने के लिए, यह संहिता अंततोगत्वा अधिक उपक्रमों की स्थापना एवं नए रोजगार अवसरों का सृजन करने के लिए स्थितियों का निर्माण करेगी।

विधेयक के लक्ष्यों के वक्तव्य में कहा गया है कि कानूनों का एकीकरण उनके कार्यान्वयन को सुगम बनाएगा एवं श्रमिकों के कल्याण एवं लाभों की मूलभूत अवधारणाओं के साथ समझौता किए बगैर परिभाषाओं एवं अधिकारियों की बहुलता को दूर करेगा। प्रस्तावित कानून इसके कार्यान्वयन में प्रौद्योगिकी का उपयोग करेगा और इसके माध्यम से कानून को प्रभावी तरीके से लागू करने के लिए पारदर्शिता और जवाबदेही लाएगा। सभी श्रमिकों तक न्यूनतम मजदूरी के दायरे को विस्तारित करना समानता की दिशा में एक बड़ा कदम होगा।

इस विधेयक में मजदूरी से संबंधित सभी अनिवार्य तत्वों-समान पारिश्रमिक, भुगतान एवं बोनस का प्रावधान है। मजदूरी से संबंधित प्रावधान असंगठित एवं संगठित दोनों ही क्षेत्रों से संबंधित सभी रोजगारों पर लागू होंगे और न्यूनतम मजदूरी को निर्धारित करने का अधिकार उनके संबंधित क्षेत्रों में केंद्र एवं राज्य सरकारों के पास बने रहेंगे। नियोक्ता, कर्मचारी, श्रमिक, न्यूनतम मजदूरी एवं मजदूरी की सुस्पष्ट व्याख्या की गई है।

यह संहिता उपयुक्त सरकारों को उन कारकों को निर्धारित करने में सक्षम बनाएगी जिनके द्वारा कर्मचारियों के विभिन्न वर्गों के लिए न्यूनतम मजदूरी तय की जाएगी। कारकों का निर्धारण आवश्यक कौशल, सौंपे गए कार्य की कठिनता, कार्यस्थल की भौगोलिक जगह एवं अन्य पहलुओं, जिन्हें उपयुक्त सरकार आवश्यक समझती है, पर विचार करने के बाद किया जाएगा। समय पर मजदूरी के भुगतान एवं मजदूरी से अधिकृत कटौती से संबंधित प्रावधान, जो वर्तमान में केवल 18,000 रु, मासिक मजदूरी पाने वाले कर्मचारियों पर ही लागू होते हैं, मजदूरी की अधिकतम सीमा पर विचार किए बगैर सभी कर्मचारियों पर लागू किया जाएगा। उपयुक्त सरकार ऐसे प्रावधानों के दायरे को सरकारी प्रतिष्ठानों तक भी विस्तारित कर सकती है।

यह सुनिश्चित करते हुए कि मजदूरी के भुगतान में जेंडर के आधार पर कोई भेदभाव न हो, विधेयक अपने पहले अध्याय में ही धारा 3 में 'समान पारिश्रमिक' के लिए प्रावधान को सम्मिलित करता है, जिसमें कहा गया है कि 'एक ही नियोक्ता द्वारा मजदूरी से संबंधित मामलों में, किसी अन्य कर्मचारी द्वारा किए गए समान कार्य या समान प्रकृति के कार्य के संबंध में जेंडर के आधार कर्मचारियों के बीच कोई भेदभाव नहीं किया जाएगा।'

कोई भी नियोक्ता किसी कर्मचारी को उपयुक्त सरकार द्वारा अधिसूचित मजदूरी की न्यूनतम दर क्षेत्र, प्रतिष्ठान या कार्य के लिए, जैसाकि किसी अधिसूचना में निर्दिष्ट किया गया है, से कम भुगतान नहीं करेगा। संहिता के तहत पहली बार किसी रोजगार के संबंध में न्यूनतम मजदूरी निर्धारित करते समय, उपयुक्त सरकार, जो राज्य सरकार या केंद्र सरकार हो सकती है, सभी मुद्दों पर ध्यान देने एवं अनुशंसाएं करने के लिए नियोक्ताओं, कर्मचारियों एवं स्वंतत्र सदस्यों के प्रतिनिधियों से निर्मित्त एक समिति नियुक्ति करेगी। यह सभी हितधारकों को न्याय सुनिश्चित करेगी। न्यूनतम मजदूरी से संबंधित अध्याय में कहा गया है। उपयुक्त सरकार पांच वर्षों के अंतराल पर मजदूरियों की न्यूनतम दरों की समीक्षा या संशोधन करेगी।'

विधेयक के तहत, केंद्र सरकार के पास, इस प्रावधान के साथ कि विभिन्न राज्यों या भौगोलिक क्षेत्रों के लिए विभिन्न राष्ट्रीय न्यूनतम मजदूरी दरें हो सकती हैं, एक राष्ट्रीय न्यूनतम मजदूरी को निर्धारित करने का अधिकार होगा। राज्य सरकारें राष्ट्रीय दर से कोई दर निर्धारित नहीं करेंगीं। राष्ट्रीय न्यूनतम मजदूरी दर निर्धारित करने से पहले केंद्र सरकार एक केंद्रीय परामर्श बोर्ड की सलाह लेगी। किए गए ओवरटाइम कार्य के लिए भुगतान का प्रावधान है।

मजदूरी प्रावधान के भुगतान के तहत संहिता में कहा गया है, ' सभी प्रकार की मजदूरियों का भुगतान वर्तमान सिक्कों या करेंसी नोटों में या चेक द्वारा या डिजिटल या इलेक्ट्रॉनिक मोड के जरिये या कर्मचारी के बैंक खाते में डालने के द्वारा किया जाएगा। ' मजदूरी का भुगतान रोजाना, साप्ताहिक, पाक्षिक या मासिक रूप से किया जा सकता है और विधेयक में भुगतानों के लिए समय-सीमाएं निर्धारित की गई हैं।

बोनस के भुगतान पर प्रावधान में कहा गया है कि बोनस का भुगतान वैसे कर्मचारियों को भी किया जाएगा जिन्होंने केवल एक महीने ही सेवा दी है। खंड 26 में कहा है कि यह भुगतान ' आठ की दर से गणना की गई और कर्मचारी द्वारा अर्जित मजदूरी का एक तिहाई प्रतिशत या सौ रुपये, इनमें जो भी अधिक हो, का वार्षिक न्यूनतम बोनस' होगा, चाहे नियोक्ता के पास पिछले लेखा वर्ष में कोई आवंटन योग्य अधिशेष हो या न हो। '

धारा में कहा गया है कि बोनस भुगतान में समानुपातिक रूप से बढोतरी होगी, अगर किसी लेखा वर्ष में आवंटन योग्य अधिशेष उच्चतर है, जो मजदूरी के अधिकतम 20 प्रतिशत के अध्याधीन है।

किसी वर्ष के लिए आय, लाभ एवं मुनाफा पर प्रत्यक्ष कर समेत स्वीकार्य कटौती के बाद, लेखा वर्ष के लिए उपलब्ध अधिशेष उस वर्ष के लिए सकल लाभ होगा। विनियोज्य अधिशेष बैंकों के लिए उपलब्ध अधिशेष का 60 प्रतिशत तथा अन्य प्रतिष्ठानों के लिए 67 प्रतिशत है।

धारा 39 के अनुसार, इस संहिता के तहत बोनस के जरिये किसी कर्मचारी को भुगतान की जाने वाली सभी राशियां लेखा वर्ष की समाप्ति के आठ महीनों के भीतर उसके नियोक्ता द्वारा उसके बैंक खाते में जमा करा दिया जाएगा। नियोक्ता को अधिक समय दिया जा सकता है लेकिन 'किसी भी स्थिति में' यह अवधि दो वर्ष से अधिक नहीं होगी।

इंस्पेक्टर राज का खात्मा करते हुए, इस संहिता में सुगमकर्ताओं का प्रावधान किया गया है जो कानून के समुचित कार्यान्वयन में नियोक्ताओं एवं कर्मचारियों की सहायता करेंगे। सुगमकर्ता की नियुक्ति केंद्र या राज्य सरकार द्वारा की जा सकती है और उन्हें पूरे राज्यों या ऐसे भौगोलिक क्षेत्रों में काम करने का अधिकार दिया जा सकता है जो उन्हें सौंपे गए हैं।

संहिता की धारा 51 में कहा गया है कि सुगमकर्ता अपने अधिकार क्षेत्र के भीतर, (क) इस संहिता के प्रावधानों का सर्वाधिक प्रभावी तरीके से अनुपालन करने से संबंधित सूचना एवं सलाह नियोक्ताओं एवं कर्मचारियों को दे सकता है ; (ख) जांच योजना के आधार पर प्रतिष्ठान का निरीक्षण कर सकता है। सरकार द्वारा बनाई गई यह जांच योजना एक वेब आधारित जांच कार्यक्रम के सृजन का प्रावधान करेगी।

धारा 51 में कहा गया है कि सुगमकर्ता मजदूरों की जांच कर सकता है, 'ऐसे रजिस्टर, मजदूरी के रिकॉर्ड या नोटिसों या तत्संबंधी हिस्सों की तलाशी, जब्ती या उसकी प्रतियां ले सकता है जिन्हें सुगमकर्ता इस संहिता के तहत किसी अपराध के संदर्भ में महत्वपूर्ण मानता हो और उसके पास यह विश्वास करने का पर्याप्त कारण हो कि नियोक्ता द्वारा कोई अपराध किया गया है।' सुगमकर्ताओं को आईपीसी एवं सीआरपीसी के तहत उनके कार्य के लिए अधिकारसंपन्न बनाया गया है।

इस संहिता के तहत अपराधों के लिए शिकायतें सुगमकर्ताओं, कर्मचारियों, पंजीकृत ट्रेड यूनियनों, या सरकार द्वारा की जा सकती हैं। संहिता में अपराधों के लिए व्यापक सजाओं का प्रावधान है। अगर कोई नियोक्ता अपने कर्मचारियों को संहिता के तहत बकाये से कम राशि का भुगतान करता है तो उस पर 50,000 रुपये तक का आर्थिक जुर्माना लगाया जा सकता है। पांच वर्ष के भीतर इस गलती को दुहराने की स्थिति में तीन महीने तक की कैद या 1 लाख रुपये तक का जुर्माना या दोनों ही लगाए जा सकते हैं।

संहिता या इसके तहत बनाये गए किसी नियम का उल्लंघन करने पर 20,000 रुपये तक का आर्थिक जुर्माना और पांच वर्ष के भीतर इसे दुहराए जाने की स्थिति में एक महीने तक की कैद या 40,000 रुपये का आर्थिक जुर्माना या दोनों ही लगाए जा सकते हैं। सुगमकर्ता नियोक्ता को संहिता का अनुपालन करने का समय और अवसर प्रदान कर सकता है और अगर अनुपालन कर लिया जाता है तो दंडात्मक कार्रवाई आरंभ नहीं कर सकता है।

विधेयक के खंड 55 में अपराधों की संरचना से संबंधित प्रावधान है। केवल ऐसे अपराध, जिनके लिए कैद की कोई सजा नहीं है, संयोजित किए जाएंगे। योग राशि अधिकतम आर्थिक दंड का 50 प्रतिशत होगी। दूसरी बार या पांच वर्ष की अवधि के भीतर फिर से या पहले संयोजित किए गए, ऐसे ही अपराध या जिसके लिए दोषसिद्धि हो चुकी हो, के लिए कोई योग नहीं किया जाएगा।

संहिता द्वारा विभिन्न धाराओं के तहत कर्मचारियों के हितों की रक्षा की जाती है। यह सिद्ध करने की जिम्मेदारी नियोक्ताओं पर है कि बगैर किसी अनुचित कटौती के समुचित भुगतान कर दिया गया है।

मजदूरी संहिता, 2017 व्यवसाय करने की सरलता को और अधिक बढ़ावा देने के लिए सरकार द्वारा प्रस्तावित चार संहिताओं में पहली संहिता है। अन्य तीन संहिताएं औद्योगिक संबंध, सामाजिक जांच एवं कल्याण तथा सुरक्षा और कार्य स्थितियों से संबंधित होंगी। जहां इनसे श्रम कानूनों में लंबे समय से प्रतीक्षित स्पष्टता आएगी, और इसकी विविधता भी न्यूनतम हो जाएंगी, वहीं संहिता के आधारभूत लाभों से कामकाजी वर्ग को उनके अधिकारों एवं जिम्मेदारियों के बारे में जानने में मदद मिलेगी और वे बड़े रोजगार अवसरों की उम्मीद कर सकेंगे।

संभावित प्रश्न

"मजदूरी संहिता, 2017 भारत में व्यवसाय करने की सरलता को और अधिक बढ़ावा देने की दिशा में कार्य करेगी।" इस कथन के पक्ष-विपक्ष की चर्चा करें।

ट्रंप की बदली नीति के निहितार्थ

विवेक काटजू
(लेखक विदेश मंत्रालय में सचिव रहे हैं।)

साभार: नई दुनिया
(2 सितंबर, 2017)

सार

इस लेख में लेखक ने अमेरिकी राष्ट्रपति की अफगानिस्तान एवं दक्षिण एशिया के संबंध पर जारी की गयी नीति की चर्चा की है तथा साथ ही इस नीति की ओबामा के समय की नीति से तुलना भी की है।

विशेष- यह लेख सामान्य अध्ययन प्रश्न पत्र-II (अंतर्राष्ट्रीय संबंध) के लिए महत्वपूर्ण है।

अमेरिका का राष्ट्रपति बनने के सात महीने बाद डोनाल्ड ट्रंप ने अफगानिस्तान और दक्षिण एशिया पर अपनी सरकार की नीति जारी की। यदि उनका प्रशासन इसे पूर्ण रूप से लागू करने में सफल रहा तो इससे न सिर्फ अफगानिस्तान में स्थायित्व का नया युग आरंभ होगा, बल्कि अमेरिका की पारंपरिक नीति में ऐतिहासिक बदलाव भी दिखेगा। जहां पाकिस्तान पर इस नीति का व्यापक प्रभाव पड़ना तय है, वहीं भारत के लिए भी यह गहरे निहितार्थ लिए हुए है। अफगानिस्तान में शांति हेतु अमेरिका बीते डेढ़ दशक से युद्धरत है। यह उसकी सबसे लंबी लड़ाइयों में से एक है। तालिबान से मुकाबले के साथ ही अमेरिका बीते कई सालों से अफगान सरकार व तालिबान के साथ बातचीत के जरिए भी अफगान समस्या का समाधान निकालने को प्राथमिकता देता रहा है, लेकिन तालिबान की डोर अभी भी पाकिस्तान के हाथों में है। वह उसे 20 वर्षों से अधिक समय से खाद-पानी दे रहा है। 2001 में जब एक हद तक उसकी कमर टूट गई थी, तब भी पाकिस्तान ने उसे फलने-फूलने के लिए आश्रय दिया। दुर्भाग्य से इसके बाद भी अमेरिका ने पाक के खिलाफ कभी कोई कदम नहीं उठाया।

पाकिस्तान अफगानिस्तान से भारत के प्रभाव को हमेशा के लिए मिटा देना चाहता है। कुछ वर्ष पूर्व तक पाकिस्तान की चिंताओं में दुबला हो रहा अमेरिका भी वहां भारत की मौजूदगी का अनिच्छुक था, लेकिन ट्रंप ने तालिबान के प्रति अमेरिका की प्राथमिकताएं बदल दी हैं। उनके नेतृत्व में अमेरिका अब चाहता है कि अफगानिस्तान में भारत अपनी भूमिका खासकर आर्थिक क्षेत्र में बढ़ाए। इसके साथ ही ट्रंप ने राजनीतिक विकल्पों को पूरी तरह बंद नहीं किया, लेकिन सीमित जरूर कर दिया है, क्योंकि उन्होंने तालिबान को अब तक आतंकी संगठन घोषित नहीं किया है। जाहिर है कि उनकी पहली प्राथमिकता तालिबान को सैन्य कार्रवाई के जरिए कुचलना है, ताकि यदि कभी सियासी समझौते की नौबत आए तो उसका सामना एक कमजोर तालिबान से हो। इसके लिए अमेरिका को पाकिस्तान में तालिबान की सुरक्षित पनाहगाहों को नष्ट करना होगा। अमेरिका ने पाकिस्तान को यह सख्त चेतावनी दी तो है कि यदि उसने तालिबान को समर्थन देना बंद नहीं किया तो उसे गंभीर नतीजे भुगतने के लिए तैयार रहना होगा, किंतु अभी यह तय नहीं कि वह अपने इस रवैये पर कायम भी रहेगा।

ट्रंप की नई नीति के खिलाफ पाकिस्तान की ओर से उम्मीद के अनुरूप कड़ी प्रतिक्रिया आई। इस नीति पर मंथन के लिए बीते दिनों पाक प्रधानमंत्री शाहिद खाकन अब्बासी ने राष्ट्रीय सुरक्षा परिषद की बैठक बुलाई, जिसमें उनके कैबिनेट मंत्री सहित सेना प्रमुख और अन्य रक्षा अधिकारी शामिल हुए। बैठक के बाद बयान में आतंकवाद के खिलाफ जंग में पाकिस्तान के योगदान और कुर्बानियों का बढ़ा-चढ़ाकर जिक्र किया गया और अफगान समस्या के लिए स्वयं वहां की सरकार को जिम्मेदार ठहराया गया। उसकी ओर से यह दावा भी किया गया कि वह खुद पूर्वी अफगानिस्तान से चलाए जा रहे पाक विरोधी आतंकी गतिविधियों का लंबे अरसे से भुक्तभोगी है।

इस पर तनिक भी आश्चर्य नहीं कि पाकिस्तान को अफगानिस्तान में भारत की भूमिका के विस्तार की बात नागवार गुजरी है। यही वजह है कि उसने अपने बयान में पड़ोसी देशों से अपने खराब रिश्ते के लिए भारत को जिम्मेदार ठहराते हुए कहा कि वह आतंकवाद का पाकिस्तान के खिलाफ कूटनीतिक हथियार के रूप में इस्तेमाल कर रहा है और पूर्व से लेकर पश्चिम तक पाकिस्तान को अस्थिर करना चाह रहा है। हर बार की तरह उसने जम्मू-कश्मीर पर घड़ियाली आंसू बहाते हुए वहां सक्रिय भारत विरोधी तत्वों को समर्थन जारी रखने की प्रतिबद्धता दोहराई। इसके बाद उसने पाकिस्तानी संसद ने ट्रंप के खिलाफ निंदा प्रस्ताव भी पारित किया। इस मोड़ पर भारत के लिए दो बातें महत्वपूर्ण हैं। पहली, भारत ने अफगान सरकार और वहां के लोगों के साथ द्विपक्षीय रिश्ते निभाने के लिए जो स्वतंत्र नीति अपनाई है, उसे जारी रखना चाहिए। अफगानिस्तान के अनुरोध पर भारत उसे आर्थिक मदद दे रहा है और सड़क, बांध, बिजली से जुड़ी परियोजनाओं के निर्माण का दायित्व बखूबी निभा रहा है। भारत शिक्षा और स्वास्थ्य के क्षेत्र में भी सक्रियता से काम कर रहा है। सुरक्षा क्षेत्र में उसने अफगानिस्तान के सैनिकों को गहन

प्रशिक्षण दिया है और कुछ हथियार भी उपलब्ध कराए हैं। भारत को अपना यह अभियान जारी रखना चाहिए। यह अच्छी बात है कि अमेरिका को अब भारत की अहमियत का एहसास हुआ है। दूसरी बात, भारत को अमेरिका को इसके लिए राजी करना चाहिए कि वह अपनी नई नीति हर हाल में लागू करे, ताकि तालिबान की कमर तोड़ी जा सके।

अफगानिस्तान में शांति के लिए पाकिस्तान पर आर्थिक, कूटनीतिक और यहां तक कि सैन्य दबाव भी डाला जाना चाहिए। तालिबान और उसके रहनुमा बने पाकिस्तान को यह एहसास दिलाना जरूरी है कि वो बंदूक के बल पर यह लड़ाई नहीं जीत सकता। ट्रंप ने संकेत दिए हैं कि अमेरिकी सेना की जब तक जरूरत होगी, तब तक अफगानिस्तान में रहेगी और आवश्यकता के अनुरूप कार्रवाई भी करेगी। यदि अमेरिका अब भी पाकिस्तान के खिलाफ कार्रवाई नहीं करता तो उसकी विश्वसनीयता पर एक बड़ा प्रश्नचिन्ह लग जाएगा।

इस पर हैरत नहीं कि चीन पाकिस्तान के बचाव में उतर आया है। चीन ने हमेशा तालिबान का पक्ष लिया है। रूस ने भी ट्रंप की नीति की निंदा की है। दरअसल रूस पिछले कई वर्षों से तालिबान और पाकिस्तान के करीब जाता दिख रहा है। उसने तमाम रियायतें देकर ईरान के साथ भी नजदीकी कायम कर ली है। ट्रंप की नीति जारी होने के बाद रूस के एक वरिष्ठ अधिकारी ने कहा कि अफगानिस्तान के संदर्भ में पाकिस्तान एक प्रमुख क्षेत्रीय ताकत है। उस पर ज्यादा दबाव क्षेत्र की सुरक्षा की दृष्टि से घातक हो सकता है। पाकिस्तान के विदेश मंत्री ख्वाजा आसिफ ने भी चीन, रूस और तुर्की से मिले समर्थन को लपकने में देरी नहीं की। सबको पता है कि ऐसा कर वह अमेरिका द्वारा पड़े दबाव को कुछ कम करना चाहता है।

1990 के दशक में जब पाकिस्तान तालिबान के समर्थन में आया था तब अमेरिका को लगा था कि दोनों की जोड़ी अफगानिस्तान में स्थिरता लगाएगी, लेकिन ये दोनों वहां अपना प्रभुत्व बढ़ाने लगे। लिहाजा तालिबान को उखाड़ फेंकने के लिए रूस, ईरान और भारत अफगानिस्तान के कद्दावर नेता अहमद शाह मसूद को मदद देने लगे, लेकिन 9/11 की घटना के दो दिन पूर्व आतंकवादियों ने मसूद की हत्या कर दी। अब अंतरराष्ट्रीय समीकरणों में पुनः तब्दीली आई है। इसका फायदा उठाने के लिए भारत को समय रहते चतुराई भरी कूटनीतिक चालें चलनी होंगी।

संभावित प्रश्न

अमेरिकी राष्ट्रपति ट्रम्प के द्वारा हाल ही में जारी की गयी अफगान नीति एवं दक्षिण एशिया नीति के निहितार्थों को स्पष्ट करें तथा साथ ही इस नीति परिवर्तन के भारत के लिए क्या मायने हैं, उसकी भी चर्चा करें।

रेलवे में व्यापक सुधार जरूरी

साभार: प्रभात खबर
(4 सितंबर, 2017)

आशुतोष चतुर्वेदी
(प्रधान संपादक)

सार

इस लेख में लेखक ने वर्तमान में हो रही रेल दुर्घटनाओं के संदर्भ में तथा अगले एक माह में आने वाले कई सारे त्योहारों के मद्देनजर रेलवे को और सतर्क होने की सलाह दी है तथा रेलवे में आवश्यक सुधारों को भी तत्काल लागू करने की आवश्यकता बताई है।

विशेष- यह लेख सामान्य अध्ययन प्रश्न पत्र-III (भारतीय अर्थव्यवस्था) के लिए महत्वपूर्ण है।

दुर्गा पूजा, दिवाली और फिर छठ आनेवाला है और यह एक तरह से रेलवे की परीक्षा की भी घड़ी है। पिछले दिनों हुए दो रेल हादसों ने पूरी रेल व्यवस्था को हिला कर रख दिया है। पहले उत्कल एक्सप्रेस और फिर कैफियत एक्सप्रेस की दुर्घटना के बाद रेलवे की कार्यप्रणाली सवालों के घेरे में है। रेलवे हम आप सबसे जुड़ा मामला है, इसलिए चिंता और बढ़ जाती है।

बिहार, झारखंड और पश्चिम बंगाल के लोगों के लिए रेल एक तरह से जीवनरेखा है। देश के अन्य हिस्सों से रेल ही हमें जोड़ती है। इन दुर्घटनाओं ने आम यात्री के मन में डर भर दिया है। यह सच है कि रेल के बड़े अधिकारियों पर कार्रवाई हुई है। रेलवे बोर्ड के चेयरमैन केके मित्तल को अपने पद से इस्तीफा देना पड़ा। इनके अलावा रेलवे के तीन वरिष्ठ अधिकारियों को छुट्टी पर भेजा गया है और तीन अन्य को निलंबित कर दिया गया है। किसी दुर्घटना के बाद वरिष्ठ अधिकारियों पर इतनी व्यापक कार्रवाई की कम मिसाल है। होता यह है कि जांच के बाद गाज नीचे के अधिकारियों और कर्मचारियों पर गिरती है। लेकिन यह समस्या का हल नहीं है।

रविवार को केंद्रीय कैबिनेट में हुए फेरबदल के तहत पीयूष गोयल को रेल मंत्रालय सौंपा गया है। निश्चित तौर पर उनके सामने ट्रेन यात्रा को सुरक्षित और निरापद बनाना तथा आम यात्रियों की अपेक्षाओं पर खरा उतरने की बड़ी चुनौती होगी। आज जरूरत यह भी है कि पूरी रेल व्यवस्था का ऑडिट हो और उसके आधार पर प्राथमिकताएं तय कर उस दिशा में समयबद्ध ढंग से काम हो।

रेल व्यवस्थाओं की पड़ताल के लिए कोई भारी भरकम सर्वे की जरूरत नहीं है। बिहार, झारखंड, पश्चिम बंगाल के लोगों से बात कर लीजिए, उनके अनुभव सुन लीजिए, तो तस्वीर साफ हो जायेगी। रिजर्वेशन खुलता नहीं कि सारी सीटें भर जाती हैं और फिर एक-एक सीट के लिए कैसी मारामारी होती है, यह लोग ही जानते हैं।

दुर्गा पूजा, दिवाली और छठ पर तो बुरा हाल होता है। छठ पर दिल्ली से खुलने वाली ट्रेनों में यात्रियों की मारामारी की हर साल तस्वीरें छपती हैं, वर्षों से छप रही वैसी तस्वीर आज तक नहीं बदली है। इस दौरान ट्रेनें और यात्री भगवान भरोसे ही चलते हैं।

रेल दुर्घटनाओं के बाद लोगों का यह सवाल पूछना जायज है कि रेलवे कितनी सुरक्षित है। ट्रैक पर भारी ट्रैफिक और मौजूदा इंफ्रास्ट्रक्चर में अपर्याप्त सुधार दुर्घटनाओं के दो मुख्य कारण हैं। हालांकि रेल दुर्घटनाएं कई अन्य कारणों से भी हो सकती हैं। जैसे, गलत सिग्नल, कर्मचारी की लापरवाही, खुले फाटक पर सड़क इस्तेमाल करने वाले की गलती आदि। साथ ही आतंकवादी और अराजक तत्व भी ट्रेनों को निशाना बनाते हैं। लेकिन, चिंताजनक बात है कि पिछली दोनों दुर्घटनाएं रेल कर्मचारियों की चूक वजह से हुई हैं।

इस साल की कुछ बड़ी दुर्घटनाओं पर नजर डालते हैं, उससे थोड़ी तस्वीर स्पष्ट होगी। 17 अगस्त, 2017 को उत्तर प्रदेश के मुजफ्फरनगर के पास पुरी-उत्कल एक्सप्रेस के हादसे में 23 लोगों की जान चली गयी और 150 से ज्यादा जख्मी हुए। 21 मई, 2017 को उन्नाव स्टेशन के पास लोकमान्य तिलक सुपरफास्ट के आठ डिब्बे पटरी से उतरने से 30 यात्री गंभीर रूप से घायल हो गये थे। 15 अप्रैल, 2017 को मेरठ-लखनऊ राजरानी एक्सप्रेस के आठ डिब्बे रामपुर के पास पटरी से उतर गये। इसमें लगभग एक दर्जन यात्री घायल हो गये थे। 30 मार्च, 2017 को महाकौशल एक्सप्रेस महोबा के पास पटरी से उतर गयी।

इसमें 50 से ज्यादा लोग घायल हुए थे। 20 फरवरी, 2017 को दिल्ली जा रही कालिंदी एक्सप्रेस टूंडला जंक्शन पर पटरी से उतर गयी थी। इस हादसे में सवारी और मालगाड़ी की आपस में टक्कर हुई थी। तीन दर्जन यात्री घायल हो गये थे। 22

जनवरी, 2017 को आंध्र प्रदेश के विजयनगरम जिले में हीराखंड एक्सप्रेस के आठ डिब्बे पटरी से उतरने की वजह से लगभग 39 लोगों की जान चली गयी थी।

इसके अलावा खुली रेलवे क्रासिंग की समस्या से अब तक हम निजात नहीं पा पाये हैं। राज्यसभा में एक लिखित जवाब में रेल राज्यमंत्री राजेन गोहिन ने कहा था कि 2016-17 में खुली रेलवे क्रासिंग पर 20 ट्रेन दुर्घटनाओं में 40 लोगों की जान गयी।

यह अच्छी पहल है कि रेलवे भी सोशल मीडिया का इस्तेमाल करता है। ऐसी खबरें भी आती हैं कि ट्वीट पर कार्रवाई हुई और व्यवस्था सुधरी। ऐसी पहल से यात्री को एहसास होता है कि उनकी कोई सुनने वाला है।

लेकिन चिंताजनक स्थिति यह भी है कि रेलवे में लगभग दो लाख कर्मचारियों की कमी है जिसमें रखरखाव करने वाले स्टॉफ की बड़ी संख्या है। यानी कर्मचारियों पर काम का दबाव है, जिससे गलती की संभावना बनी रहती है।

नीति आयोग के एक अध्ययन के हवाले से कहा गया है कि 2012 के बाद से हर 10 में छह दुर्घटनाएं रेलवे कर्मचारियों की गलती से होती हैं। रेलवे ने अपने 66 हजार किलोमीटर के ट्रैक को 1219 सेक्शन में बांटा हुआ है जिसमें से लगभग 500 सेक्शन 100 फीसदी क्षमता पर कार्य कर रहे हैं। कहीं-कहीं तो क्षमता से अधिक ट्रेनों का परिचालन हो रहा। ट्रेन दुर्घटनाएं अधिकतर इन्हीं सेक्शन पर होती हैं। दबाव की वजह से ट्रैक के रखरखाव के लिए पर्याप्त समय उपलब्ध नहीं है। ट्रेनें समय पर नहीं चलती, सुविधाएं नाकाफी हैं, यह एक अलग समस्या है। फरवरी, 2015 में रेल मंत्रालय ने रेलवे की स्थिति पर एक श्वेत पत्र प्रकाशित किया था।

इसमें भी पटरियों के रखरखाव को लेकर गंभीर चिंता जाहिर की गयी थी। इसमें कहा गया था कि 1,14,907 किलोमीटर पटरी में से 4,500 किमी पटरी का हर साल नवीनीकरण होना चाहिए। लेकिन वित्तीय कमी के कारण पिछले छह साल से नवीनीकरण पर ध्यान नहीं दिया जा रहा है। 2014 में 5300 किमी पटरी को नवीकरण का लक्ष्य निर्धारित किया गया था, जबकि रेलवे 2100 किमी का लक्ष्य पूरा नहीं कर पा रहा है।

लब्बोलुआब यह कि नवीनीकरण लगातार पिछड़ता जा रहा है, नतीजतन रखरखाव पर भारी खर्च करना पड़ रहा है और यह दुर्घटनाओं का एक कारण भी बनता है। इन तथ्यों को देखते हुए यात्रियों के मन में रेलवे की व्यवस्था पर सवाल उठना लाजिमी है। रेलवे को अपनी कार्यप्रणाली में सुधार कर इन आशंकाओं को दूर करने की आवश्यकता है।

संभावित प्रश्न

रेलवे में हो रही लगातार दुर्घटनाएं तभी रोकी जा सकती है, जब भारत में रेलवे का संस्थागत नवीनीकरण के साथ-साथ संरचनात्मक रूपांतरण भी हो। इस कथन से आप कहां तक सहमत हैं? चर्चा करें।

ब्रिक्स में बदला हुआ चीन

मनोज जोशी
(लेखक ऑब्जर्वर रिसर्च फाउंडेशन के प्रतिष्ठित फेलो हैं)

साभार: अमर उजाला
(5 सितंबर, 2017)

सार

इस लेख में लेखक ने हाल ही में हुई ब्रिक्स की बैठक में भारत-चीन के सम्बन्धों में डोकलाम विवाद की वजह से आये गतिरोध के टूटने एवं चीन के द्वारा भारत के साथ पाकिस्तानी जमीन से कार्यरत आतंकवादी संगठनों के विरुद्ध प्रस्ताव स्वीकृत करने के निर्णय को रेखांकित किया है।

विशेष- यह लेख सामान्य अध्ययन प्रश्न पत्र-II (अंतर्राष्ट्रीय संबंध) के लिए महत्वपूर्ण है।

जैसे ही शियामेन में ब्रिक्स शिखर सम्मेलन के लिए भारत और चीन ने डोकलाम गतिरोध को खत्म किया और चीन ने सुचारु ढंग से ब्रिक्स सम्मेलन की मेजबानी शुरू की, उत्तर कोरिया के किम जोंग उन ने परमाणु परीक्षण करके धमाका कर दिया। हालांकि शिखर सम्मेलन में इसे बहुत महत्व नहीं दिया गया और औपचारिक निंदा करके यह सिफारिश की गई कि शांतिपूर्ण ढंग से और सभी संबंधित पक्षों से सीधे बातचीत करके इसका समाधान तलाशा जाए। इस वर्ष सम्मेलन की थीम है-उज्ज्वल भविष्य के लिए मजबूत भागीदारी। ब्रिक्स के नेता, खासकर भारत और चीन आर्थिक विकास पर ध्यान देना चाहते हैं। भारत की अर्थव्यवस्था लड़खड़ा रही है और चीन पुनर्गठन के दौर में है। दोनों बखूबी जानते हैं कि उन्हें न केवल यह क्षेत्र समेत पूरे विश्व में, बल्कि उन दोनों के बीच आपस में भी शांति और स्थिरता की जरूरत है। हो सकता है कि डोकलाम गतिरोध के समाधान के पीछे यह एक प्रमुख कारक हो।

आर्थिक अनिवार्यताओं के बावजूद ब्रिक्स के सदस्य देश जानते हैं कि अंतरराष्ट्रीय और क्षेत्रीय घटनाक्रमों के चलते उनका भावी विकास कमजोर हो सकता है। चीन सावधानीपूर्वक अमेरिका पर नजर गड़ाए हुए है, जो व्यापार युद्ध की धमकी दे रहा है, जबकि भारत का ध्यान आतंकवाद के खतरों पर केंद्रित है। यदि कोरियाई प्रायद्वीप में तनाव बढ़ता है, तो वैश्विक अर्थव्यवस्था पर इसका व्यापक असर होगा।

शियामेन शिखर सम्मेलन की एक खास विशेषता यह है कि पाक आतंकी समूहों को लेकर चीन के रुख में बदलाव आया है। ब्रिक्स सम्मेलन के घोषणापत्र में न केवल आतंकवाद की निंदा की गई है, बल्कि हिंसा और असुरक्षा के लिए जिम्मेदार आतंकी समूहों की एक बड़ी सूची में पाकिस्तान के हक्कानी नेटवर्क, अल कायदा, लश्कर-ए-तैयबा और जैश-ए मोहम्मद जैसे चार आतंकी समूहों का नाम लिया गया। मात्र दो हफ्ते पहले जब अमेरिका ने आतंकवादियों को पनाह देने के लिए सख्त चेतावनी दी थी, तब चीन ने पाकिस्तान का बचाव करते हुए कहा था कि आतंकवाद से लड़ाई में इस्लामाबाद अग्रणी है और उसने इस लड़ाई में कई बलिदान दिए हैं। पाकिस्तान के लिए यह एक संदेश है, जिसकी अनदेखी करना उसकी मूर्खता होगा।

चीन ने अब आखिर ऐसा क्यों किया? इसका जवाब शायद इस तथ्य में है कि आतंकवाद पर शियामेन घोषणापत्र का वह पैराग्राफ निर्दोष अफगान लोगों के खिलाफ हिंसा की आलोचना से शुरू हुआ है। इसमें अफगानिस्तान की राष्ट्रीय सरकार के साथ वहां की राष्ट्रीय सुरक्षा और सुरक्षा बलों का समर्थन किया गया है। इसे अफगानिस्तान पर हाल में घोषित अमेरिकी नीति पर चीन-रूस के संयुक्त जवाबी हमले के रूप में देखा जा सकता है। इसी क्रम में घोषणापत्र में तालिबान, इस्लामिक स्टेट, अल कायदा और उससे जुड़े पूर्वी तुर्किस्तान इस्लामिक मूवमेंट, इस्लामिक मूवमेंट ऑफ उज्बेकिस्तान, तहरीक-ए तालिबान पाकिस्तान और हिज्बुल तहरीर और अफगानिस्तान में सक्रिय सभी आतंकी समूहों की सूची दी गई है।

पिछले वर्ष हुए गोवा शिखर सम्मेलन में भी करीब छह पैरा में आतंकवाद की आलोचना की गई थी, पर वह निंदा कुछ हद तक सामान्य थी। उसमें मेजबान देश भारत का नजरिया था, जो संयुक्त राष्ट्र महासभा में अंतरराष्ट्रीय आतंकवाद (सीसीआईटी) पर व्यापक कन्वेंशन को जल्दी अपनाने पर जोर देना चाहता था। उसमें अंतरराष्ट्रीय शांति और सुरक्षा के लिए वैश्विक और अभूतपूर्व खतरा बताकर इस्लामिक स्टेट और उससे जुड़े समूहों को रेखांकित किया गया था। लेकिन शियामेन घोषणापत्र में नामित आतंकी समूहों में से किसी को भी संभवतः चीन की आपत्ति के कारण शामिल नहीं किया गया था।

पाकिस्तानी आतंकी समूहों की निंदा की अनुमति देकर चीन भी भारत को खुश करना चाहता है, जो संयुक्त राष्ट्र की अल कायदा समिति द्वारा पठानकोट और उड़ी हमले के लिए जिम्मेदार मसूद अजहर का नाम प्रतिबंधित आतंकियों की सूची में डालने

से बीजिंग की रोक से नाराज है। जैश-ए मोहम्मद को कमेटी द्वारा वर्ष 2001 में पहले ही सूचीबद्ध किया गया था और चीन भी उस फैसले के साथ था। पर जब अजहर का नाम डालने की बात आई, तो चीन ने कहा कि भारत ने उसके खिलाफ पर्याप्त सबूत नहीं दिए हैं। इसलिए अब भी हमें यह नहीं मानना चाहिए कि वह अपनी आपत्ति हटा लेगा।

हमें इस धारणा से परहेज करने की जरूरत है कि चीन पाकिस्तान की गड़बड़ी पर रोक लगा रहा है, असल में इसका उल्टा भी हो सकता है। बीजिंग इस्लामाबाद को और करीब ला सकता है। चीन-पाकिस्तान आर्थिक गलियारे में निवेश करने के बाद चीन अपने निवेश का लाभ पाने के लिए अफगान-पाक क्षेत्र में शांति और स्थिरता को बढ़ावा देना चाहता है और इस क्षेत्र में शांति व स्थिरता उसकी वन बेल्ट वन रोड योजना के लिए भी महत्वपूर्ण है। चीन वास्तव में यहां एक बड़ी भूमिका के बारे में सोच सकता है। यह महत्वपूर्ण है कि ब्रिक्स बिजनेस फोरम में शी जिनपिंग ने सीरिया, फलस्तीन और लीबिया से संबंधित मुद्दों के राजनीतिक समाधान के लिए संवाद और परामर्श को जरूरी बताया। इस अर्थ में चीन के नए रुख को वैश्विक मुद्दों पर चीन की सक्रियता के रूप में अच्छी तरह समझा जा सकता है।

नरेंद्र मोदी और शी जिनपिंग, दोनों जानते हैं कि उन्हें आर्थिक मुद्दों पर ध्यान देने की जरूरत है, जिस बुनियादी मुद्दे के लिए ब्रिक्स का गठन किया गया था। चाहे हम चीन को पसंद करें या नहीं, लेकिन भारत चीन की पूंजी और अनुभव का अपने मैन्यूफेक्चरिंग क्रांति में फायदा उठा सकता है, जिसका वायदा मोदी ने किया है। पिछले तीस वर्षों से विवादों को कम करना और सहयोग बढ़ाना भारत-चीन रिश्ते की पहचान है। हमें पिछले दो वर्षों के मनमुटाव को पीछे रखने और ब्रिक्स द्वारा उपलब्ध कराए गए मंच का इस्तेमाल करने की जरूरत है।

संभावित प्रश्न

ब्रिक्स बैठक में चीन के बदले हुए रुख ने भारत को भी आश्चर्यचकित कर दिया। चीन के रुख में आये इस परिवर्तन के पीछे उत्तरदायी कारणों को दर्शायें तथा साथ ही भारत को अब क्या कदम उठाने की आवश्यकता है, इसकी भी चर्चा करें।

महंगी महाविफलता

साभार: राष्ट्रीय सहारा
(6 सितंबर, 2017)

सार

इस लेख में लेखक ने हाल ही में रिजर्व बैंक के द्वारा नोटबंदी से जुड़ी जो रिपोर्ट पेश की है, उसकी समीक्षा की है तथा नोटबंदी के निर्णय को आर्थिक रूप से विफल बताया है।

विशेष- यह लेख सामान्य अध्ययन प्रश्न पत्र-III (अर्थव्यवस्था) के लिए महत्वपूर्ण है।

आखिरकार, नोटबंदी के पूरी तरह से विफल रहने पर रिजर्व बैंक ने भी आधिकारिक रूप से मोहर लगा दी। महीनों तक टालमटोल करने के बाद, आखिरकार केंद्रीय बैंक ने उस सच्चाई को विधिवत स्वीकार कर लिया, जो वैसे भी कोई बहुत छिपी हुई नहीं थी। खैर! अब यह एक आधिकारिक तय है। पिछले साल नवम्बर के शुरू में प्रधानमंत्री ने पांच सौ और हजार रुपये के नोटों पर जो पाबंदी लगाई थी, उसके बाद नोटबंदीशुदा नोटों का 99 फीसद हिस्सा बैंकों में लौट आया है। 15.44 लाख करोड़ रुपये के नोटों को यकायक चलन से बाहर किया गया था, उनमें से 15.28 लाख करोड़ रुपये के नोट बैंकिंग व्यवस्था में लौट आए थे। इस तरह बैंकिंग व्यवस्था में न लौटने वाले नोट 16,000 करोड़ रुपये से ज्यादा के नहीं होंगे।ये आंकड़े क्या सचमुच नोटबंदी की विफलता की कहानी कहते हैं? यह सवाल इसलिए और भी महत्त्वपूर्ण हो जाता है कि रिजर्व बैंक के उक्त आंकड़े आने के बाद भी सरकार ने नोटबंदी की सफलता का अपना दावा दुहराया है। वित्त मंत्री अरुण जेटली ने खासतौर पर इस मामले में सरकार की ओर से मोर्चा संभाला है। लेकिन नोटबंदी पर जेटली का बचाव, वास्तव में नोटबंदी के मूल लक्ष्यों से ही कतराते हुए पेश किया गया है। सभी जानते हैं कि नोटबंदी की घोषणा के प्रधानमंत्री के टेलीविजन प्रसारण में सबसे ज्यादा जोर, काले धन की अर्थव्यवस्था और काले धन पर हमला किए जाने पर था। यहां तक कि नोटबंदी को कालेधन पर सर्जिकल स्ट्राइक तक बताया जा रहा था। इसके साथ चलताऊ तरीके से जाली नोटों और आतंकवाद की फंडिंग पर प्रहार की बात भी जोड़ दी गई थी। और नोटबंदी को काले धन पर प्रहार किस तरह करना था? सरकार की ओर से यह माना और बताया जा रहा था कि काले धन का मतलब ही है बेहिसाबी नकदी। नोटबंदी की छन्नी से काली नकदी छनकर अलग हो जाएगी। होगा यह कि जो ईमानदार हैं, वे तो अपने पुराने नोट बैंकों में ले जाकर बदलवा लेंगे। मगर काले धन के खिलाड़ियों की अपना काला पैसा, नये नोटों से बदलवाने के लिए बैंकों में जमा कराने की, बैंकों के सामने ले जाने की हिम्मत ही नहीं होगी क्योंकि बैंकों में उन्हें इसकी सफाई देनी पड़ेगी। नतीजा यह होगा कि काल धन, काले धन वालों की तिजारियों में रखा-रखा ही बेकार हो जाएगा। काले धन पर इस सीधे हमले को ही नोटबंदी का सबसे बड़ा निशाना बताया जा रहा था। नोटबंदी की गोपनीयता से लेकर आकस्मिकता तक, सब को ठीक इसी आधार पर जरूरी ठहराया जा रहा था। उस समय इक्का-दुक्का मामलों में औपचारिक तरीके से, लेकिन मुख्यत: अनौपचारिक रूप से शासन में विभिन्न स्तरों से इसके अनुमान भी पेश किए जा रहे थे कि इस तरह नष्ट होने वाला काला धन कितना होगा? 20 से 30 फीसद तक खारिजशुदा नोटों के बैंकिंग व्यवस्था में न लौटने और इस तरह सीधे-सीधे नष्ट हो जाने का अनुमान लगाया जा रहा था। इतना ही नहीं, इस नष्ट हुए ''काले धन' को सीधे सरकार की ''कमाई' मानकर, इसके भी चर्चे हो रहे थे कि 3 से 5 लाख करोड़ रुपये के बीच की ''राष्ट्र' की इस अप्रत्याशित कमाई को, किस तरह खर्च किया जाना चाहिए। इसके लिए सीधे-सीधे गरीबों में पैसा बांट देने से लेकर, मुफ्त के इन संसाधनों का बुनियादी ढांचे के निर्माण से लेकर कल्याणकारी कायरे पर खर्च करने तक के सुझाव भी आ रहे थे। इसके बल पर ब्याज की दरें घटाए जाने की उम्मीदें जताई जा रही थीं सो अलग। परंतु अब पता चला है कि मुश्किल से एक फीसद धन इस तरह नष्ट हुआ है और यह मानने का कोई कारण नहीं है कि इसमें काफी पैसा ऐसे ईमानदार लोगों का नहीं होगा, जो तरह-तरह के कारणों से, तय की गई समय सीमा में अपने पुराने नोट बैंकों तक नहीं ले जाए पाए थे। साफ है कि काले धन के खिलाड़ियों पर नोटबंदी का कम-से-कम सीधे तो कोई असर नहीं पड़ा है। और जहां तक ''राष्ट्र' की इस कसरत से कुछ कमाई होने का सवाल है, तो नोटबंदी के चलते नये नोट छपवाने और बैंकों को अपने हाथों में पुराने नोटों में जमा हो गई भारी और निवेश के लिए अनुपलब्ध राशि पर जो ब्याज देना पड़ रहा था, उसकी किसी हद तक क्षतिपूर्ति के लिए रिजर्व बैंक द्वारा किया गया खर्च, इन दो मदों में ही 30,000 करोड़ रुपये से ज्यादा खर्च होने का अनुमान है। इस तरह, नष्ट हुए करीब 16,000 करोड़

रुपये को अगर सरकार की कमाई भी मान लिया जाए, तब भी नोटबंदी के लिए इससे दोगुना खर्चा तो सरकारी खजाने से सीधे ही करना पड़ा है। इसमें अगर, नये नोटों के लिए एटीएम मशीनों को रीकैलीबरेट करने पर आया करीब 25,000 करोड़ रुपये का खर्च और जोड़ दिया जाए तो, नोटबंदी का खर्चा इस कमाई से चार गुना हो जाता है। बहरहाल, देश के लिए नोटबंदी का बहुत महंगी विफलता साबित होना, नोटबंदी के चलते हुए इन पचास हजार करोड़ रुपये के खर्चों तक ही सीमित नहीं है। नोटबंदी से नाहक गई 103 आम लोगों की जानों के हिसाब को अगर हम अलग भी रख दें तब भी, नोटबंदी से हुआ देश की अर्थव्यवस्था का नुकसान उससे बहुत-बहुत भारी है। सेंटर फॉर ''मॉनीटरिंग इंडियन इकोनॉमी' के अनुमान के अनुसार यह नुकसान 1.5 लाख करोड़ रुपये के करीब बैठेगा। जैसा कि सभी जानते हैं, नोटबंदी की सबसे बुरी मार कृषि समेत हमारी अनौपचारिक अर्थव्यवस्था पर पड़ी है, जो देश में तीन-चौथाई रोजगार का स्रेत है। खास बात यह है कि यह मार अब भी लगातार पड़ ही रही है। साफ है कि नोटबंदी बहुत भारी और महंगी भूल साबित हुई है। यह दूसरी बात है कि जेटली अब भी यह कहकर नोटबंदी के आलोचकों को ही गलत ठहराने में लगे हुए हैं कि उन्होंने काले धन पर नोटबंदी की मार को सही तरीके से समझा नहीं है। लेकिन सचाई से जेटली भी इनकार नहीं कर सकते हैं कि उनकी सरकार ने नोटबंदी के लक्ष्यों को ही बदलने की लगातार कोशिश की है और इसी क्रम में नकदी अनुपात घटाने से लेकर डिजिटल अर्थव्यवस्था को बढ़ाने तक के नये लक्ष्य उछाले जाते रहे हैं। यह भी तो नोटबंदी की भारी विफलता ही सबूत है।

संभावित प्रश्न

हाल ही में रिजर्व बैंक द्वारा जारी किये गए आंकड़ों से ये सिद्ध होता है कि नोटबंदी के जिस उद्देश्य को प्रधानमंत्री ने इसे लागू करते हुए बताया वह विफल हो गया है। इस कथन का आलोचनात्मक परीक्षण करें।

कूड़े का प्रबंधन और हमारी आदतें

साभार: नई दुनिया
(7 सितंबर, 2017)

सुनीता नारायण
(पर्यावरणविद व महानिदेशक, सीएसई)

सार

इस लेख में लेखिका ने हाल ही में दिल्ली के गाजीपुर में हुए कूड़े के ढेर के हादसे के कारणों की चर्चा करते हुए ये भी बताया है कि भारत में कूड़ा प्रबंधन एवं उसको लेकर हमारी अभिवृत्ति नकारात्मक है, जिस वजह से यह समस्या समाप्त नहीं हो पा रही। ।

विशेष- यह लेख सामान्य अध्ययन प्रश्न पत्र-III (पर्यावरण एवं पारिस्थितिकी) के लिए महत्वपूर्ण है।

हर दिन आती नई-नई खबरों के बीच गाजीपुर हादसे को चंद रोज में ही हम भूलने लगे हैं। दिल्ली-उत्तर प्रदेश सीमा पर स्थित इस इलाके में पिछले दिनों कूड़े के पहाड़ के ढहने से दो लोगों को अपनी जान गंवानी पड़ी थी। इस घटना के बाद संबंधित अमला सक्रिय जरूर हुआ, लेकिन वह सक्रियता भी चंद रोज में ही शांत होती दिखने लगी है। यहां आशय उस दुर्भाग्यपूर्ण घटना को फिर से शब्द देने का नहीं, बल्कि उस घटना के बहाने देश में कचरा प्रबंधन की स्थिति पर ध्यान खींचना है।

हम यह तो बखूबी जानते हैं कि कचरा आज एक बड़ी समस्या बन चुका है। मगर यह शायद ही हम जानते हैं कि इसका समाधान सिर्फ उसके निस्तारण की तकनीक में नहीं, बल्कि घरेलू स्तर के पृथक्करण तंत्र से तकनीक को जोड़ने में छिपा है, ताकि लैंडफिल एरिया (भराव क्षेत्र) तक उसके पहुंचने की नौबत ही न आए। यानी उसे पहले ही साफ किया जा सके और किसी न किसी रूप में उसका दोबारा इस्तेमाल हो सके। अगर ऐसा नहीं किया गया, तो ऊर्जा या अन्य दूसरे कामों के लिए कचरे का कोई मोल नहीं रह जाएगा। दुर्भाग्यपूर्ण यह है कि हमारी कचरा प्रबंधन प्रणाली इस मोर्चे पर निष्क्रिय-सी दिखाई देती है।

यह स्थानीय निकायों की जवाबदेही है कि वे शहरी ठोस कचरा (एमएसडब्ल्यू) कानून 2016 के अनुसार स्रोत पर ही कचरे को अलग-अलग करना सुनिश्चित करें। इसका अर्थ यह है कि लोगों को इसके लिए जागरूक किया जाए और फिर इस सूखे व गीले या सड़न योग्य या दोबारा इस्तेमाल होने वाले कचरे को नगर निकाय अलग-अलग जमा करके उनके उचित निस्तारण की व्यवस्था करे। असल में, कचरा प्रबंधन को लेकर एक आसान सा समाधान यही दिखता है कि उसे जमा करो और भराव क्षेत्र में डाल दो या फिर प्रोसेगिंग प्लांट (निपटान इकाई) के हवाले कर दो। मगर देश-दुनिया के अनुभव बताते हैं कि कचरे को अलग-अलग किए बिना निस्तारित किए जाने वाले कूड़े से तैयार ईंधन की गुणवत्ता खराब होती है और वह हमारे काम का नहीं रह जाता है। लिहाजा हमारे नगर निगमों को घर के स्तर पर ही कचरे को अलग-अलग करने की मुहिम चलानी चाहिए।

इस मामले में गोवा की राजधानी पणजी एकमात्र ऐसा शहर है, जिसने इस व्यवस्था को सही मायने में जमीन पर उतारा है। वहां घरों से अलग-अलग दिन अलग-अलग कचरा जमा किया जाता है। इससे घरों में ही कचरे का पृथक्करण सुनिश्चित हो जाता है। इतना ही नहीं, वहां ऐसा न करने वाले नागरिकों पर जुर्माने की व्यवस्था तो है ही, कॉलोनी स्तर पर ही कचरे के निस्तारण की व्यवस्था भी की गई है। और सबसे खास बात यह कि होटल जैसे बड़े-बड़े व्यावसायिक प्रतिष्ठानों के लिए बैग मार्किंग सिस्टम भी बनाया गया है, ताकि नियमों का उल्लंघन करने वाले प्रतिष्ठानों को पकड़ा जा सके और दंडित किया जा सके।

केरल के अलेप्पी में एक दूसरी व्यवस्था काम करती है। वहां म्युनिसिपल कॉरपोरेशन कचरा जमा नहीं करता, क्योंकि वहां ऐसी कोई जगह ही नहीं, जहां इसे फेंका जा सके। वहां के एकमात्र भराव क्षेत्र को नजदीकी गांव वालों ने बंद करा दिया है। साफ है, जब म्युनिसिपैलिटी कचरा जमा ही नहीं कर रहा, तो लोग इसका खुद प्रबंध कर रहे हैं। वे इसे अलग-अलग जमा करते हैं और फिर उससे जितनी खाद बना सकते हैं, बनाते हैं। यह खाद घरेलू बागवानी में काम आती है। रही बात नॉन-बायोडिग्रेडेबल (प्राकृतिक तरीके से न सड़ने वाला) कचरे की, तो इस मोर्चे पर सरकार सक्रिय है। ऐसे कचरों के निस्तारण के लिए वह पहले से ही व्यवस्थित अनौपचारिक वेस्ट-रिसाइकिलिंग क्षेत्रों की मदद लेती है। इस व्यवस्था को अपनाकर म्युनिसिपैलिटी ने कचरे के भंडारण या उसकी ढुलाई आदि पर होने वाला अपना खर्च भी बचा लिया है।

यह कचरा प्रबंधन का एक पहलू है। इसका दूसरा पहलू यह सुनिश्चित करना होना चाहिए कि ऐसे कूड़े के लिए कहीं कोई जगह ही न छोड़ी जाए, जिसे छांटकर अलग न किया गया हो। मतलब साफ है कि शहरों में लैंडफिल एरिया का प्रबंधन सख्ती से किया जाए। एमएसडब्ल्यू कानून 2015 में कहा गया है कि लैंडफिल एरिया का इस्तेमाल सिर्फ ऐसे कचरे के लिए होना चाहिए, जो दोबारा उपयोग लायक न हो, किसी दूसरे काम में इस्तेमाल न आ सके, जो ज्वलनशील या रिएक्टिव न हो। सवाल यह है कि इसे लागू कैसे किया जाए? फिलहाल नगर निगम या नगर पालिकाएं कचरा प्रबंधन को लेकर जो अनुबंध करती हैं, उसमें अधिक से अधिक मात्रा में कचरे को भराव क्षेत्र तक लाने को प्रोत्साहित किया जाता है। चूंकि ठेकेदार को कचरे की मात्रा के अनुसार ही रकम अदा की जाती है, यानी अधिक से अधिक कचरा व उसी अनुपात में ठेकेदारों का आर्थिक लाभ। इतना ही नहीं, इन निकायों को कचरे को फिर से इस्तेमाल के लायक बनाने की बजाय उसे जमा करना, ढुलाई करना और फिर भराव क्षेत्र में फेंक देना कहीं ज्यादा आसान लगता है।

इस सोच को बदलने के लिए जरूरी है कि लैंडफिल टैक्स लगाया जाए। अनुबंध इस तरह के हों कि कचरे के लिए नगरपालिका कोई भुगतान न करे, बल्कि ठेकेदारों से इसके लिए रकम वसूली जाए। यह व्यवस्था कचरा निस्तारण इकाइयों को भी आर्थिक लाभ पहुंचाएगी और सुनिश्चित करेगी कि भराव क्षेत्र तक कम से कम कचरा पहुंचे। यहां यह भी स्पष्ट किया जाना चाहिए कि कचरे के आधार पर घरों से भी टैक्स वसूला जाए और अगर वे घरेलू कचरा अलग-अलग नहीं करते, तो उनसे जुर्माना लिया जाए। हमें यह मानना ही होगा कि हर घर, हर प्रतिष्ठान, हर होटल कचरा पैदा करने का स्रोत है, इसलिए वह प्रदूषक है। लिहाजा उन पर भी वह टैक्स लगना चाहिए, जो किसी अन्य प्रदूषक इकाई पर लगता है, वरना हमारे शहर कचरे के ढेर में तब्दील हो जाएंगे।

इस मामले में 'निम्बी' यानी नॉट इन माई बैकयार्ड (मेरे घर के पीछे नहीं) अभियान एक गेम-चेंजर साबित हो सकता है। अब गरीब व गांव-समाज के लोग अपने-अपने घरों के पीछे कचरा फेंकने का विरोध करने लगे हैं। वे अब ऐसी जगहों के आस-पास कतई नहीं रहना चाहते, जहां लैंडफिल एरिया हो। वाकई जब यह भूमि अपनी है, तो फिर इसे साफ रखने की जिम्मेदारी भी हमारी ही होनी चाहिए। क्या हम ऐसा करेंगे?

संभावित प्रश्न

भारत में कचरा प्रबंधन की समस्या का समाधान तब तक नहीं हो सकता, जब तक हमारी अभिवृत्ति इसके निपटान को लेकर नकारात्मक रहेगी। इस कथन का विश्लेषण करें।

साक्षरता को मिशन बनाने की जरूरत

साभार: हिन्दुस्तान
(8 सितंबर, 2017)

एम वेंकैया नायडू
(उप-राष्ट्रपति)

सार

इस लेख में भारतीय उपराष्ट्रपति वेंकैया नायडू ने विश्व साक्षरता दिवस के अवसर पर भारत में अभी भी पिछड़ी हुई साक्षरता दर को सौ फीसदी तक पहुंचाने के लिए वर्तमान नीति में परिवर्तन को जरुरी बताया है।

विशेष- यह लेख सामान्य अध्ययन प्रश्न पत्र-II (शासन व्यवस्था) के लिए महत्वपूर्ण है।

चूंकि भारत भी आज दुनिया के तमाम देशों की तरह 51वां विश्व साक्षरता दिवस मना रहा है, तो इस मौके पर राष्ट्रों की तरक्की में साक्षरता की केंद्रीय भूमिका की तरफ मैं आप सबका ध्यान आकृष्ट करना चाहता हूं। यह वह दिन है, जब हम अपने स्वतंत्रता संघर्ष और महात्मा गांधी के शब्दों को याद कर सकते हैं, जिन्होंने कहा था कि अशिक्षा एक अभिशाप और शर्म है, जिसे मुक्ति पाई जानी ही चाहिए। यह वह दिन है, जब हम अपनी स्वतंत्रता के 70 वर्षों की तरक्की पर निगाह डाल सकते हैं। पंडित नेहरू ने 15 अगस्त, 1947 की मध्य रात्रि को बड़े ही सार्थक शब्दों में कहा था, 'आम आदमी को आजादी व अवसर मुहैया कराने के लिए और सामाजिक-आर्थिक व राजनीतिक संगठनों के सृजन के लिए, जो देश के हरेक पुरुष व स्त्री को इंसाफ व आनंदपूर्ण जीवन की गारंटी दे' हमें विकास के मार्ग पर कदम बढ़ाने की जरूरत है।

हमने इन वर्षों में जो तरक्की की सीढ़ियां चढ़ी हैं, जो मील के पत्थर गाड़े हैं, उन्हें गर्व से देख सकते हैं। 1947 में देश जब आजाद हुआ था, तब महज 18 प्रतिशत भारतीय लिख-पढ़ सकते थे। आज करीब 74 फीसदी भारतीय साक्षर हैं। 95 प्रतिशत से भी अधिक बच्चे स्कूल जा रहे हैं और 86 फीसदी नौजवान कामकाज के लायक शिक्षित हैं। यह कोई कम बड़ी उपलब्धि नहीं है। हालांकि, हमें अपनी पुरानी सफलताओं से प्रेरणा लेते हुए भविष्य की ओर अग्रसर होना है।

निस्संदेह, हमें अभी लंबी दूरी तय करनी है। हम इस तथ्य की भी अनदेखी नहीं कर सकते कि करीब 35 करोड़ युवा व प्रौढ़ शिक्षा की दुनिया से बाहर हैं, और इसके कारण भारत की तरक्की और विकास में वे कोई सार्थक भूमिका नहीं निभा पा रहे। इसके अलावा करीब 40 प्रतिशत स्कूली बच्चे प्राथमिक शिक्षा पूरी करने के बाद भी बुनियादी साक्षरता कौशल से वंचित रह जाते हैं। हमारे सामने एक बड़ी चुनौती है, जिससे हमें व्यवस्थित रूप से निपटना है।

आज के दिन ने हमें अपनी सामूहिक उपलब्धि का उत्सव मनाने का अवसर दिया है। यह हमारे अथक प्रयासों की प्रेरक कहानी है। अनेक व्यक्तियों और संस्थाओं ने इस राष्ट्रीय कोशिश में अपना योगदान दिया है। त्रावणकोर और बड़ौदा के बौद्धिक शासकों ने शिक्षा के अवसरों का विस्तार किया था। महात्मा गांधी से प्रेरणा लेते हुए वेल्दी फिशर और लौबाह ने 1953 में लखनऊ में लिटरेसी हाउस की स्थापना की थी। प्रौढ़ शिक्षा के क्षेत्र में 1959 में ही ग्राम शिक्षण मुहिम जैसे कार्यक्रम चलाए गए थे। लेकिन 1990 के दशक में सरकार के राष्ट्रीय साक्षरता मिशन ने इन प्रयासों को जबर्दस्त रफ्तार दी। और इन तमाम प्रयासों को ही इस बात का श्रेय जाता है कि आज हमारी तीन-चौथाई आबादी लिख-पढ़ सकती है।

हालांकि, वैश्विक परिप्रेक्ष्य में चुनौतियां अब भी कम नहीं हैं और वे फौरन ध्यान दिए जाने की मांग भी करती हैं। सरकार मानती है और जैसा कि प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने श्यामन (चीन) के ब्रिक्स सम्मेलन में बीते 5 सितंबर को कहा भी है कि ''हमारे विकास संबंधी एजेंडे का आधार 'सबका साथ, सबका विकास' की धारणा है। यानी सामूहिक प्रयास और समावेशी विकास।'' अगले पांच वर्षों में एक नए भारत को आकार देने में भी देश जुटा हुआ है। वैश्विक रूप से हम जनवरी 2016 के उस संयुक्त राष्ट्र के '2030 एजेंडा फॉर सस्टेनेबल डेवलपमेंट' के प्रति प्रतिबद्ध हैं। इस वैश्विक एजेंडे में एक 'सार्वभौमिक साक्षर दुनिया' की परिकल्पना की गई है। और इस एजेंडे के एक लक्ष्य को, जो खास तौर से नौजवानों और प्रौढ़ों की साक्षरता पर केंद्रित है, साल 2030 तक हासिल करना है।

अगर हमें 2030 तक साक्षर दुनिया की लक्ष्य-प्राप्ति की ओर तेजी से बढ़ना है और भारत को यह सुनिश्चित करना है कि देश के सभी नौजवान और प्रौढ़ों की एक बड़ी संख्या इस कौशल को प्राप्त कर सके, तो हमें अपनी पुरानी रणनीति की समीक्षा करनी होगी और कौन सी नीति कारगर रही व कौन निरर्थक, यह जानने के बाद देश के भीतर व बाहर के सफल

उदाहरणों से सबक सीखना होगा। निस्संदेह, इसे एक सामूहिक प्रयास बनाना पड़ेगा, जिसमें सरकार की भूमिका अग्रणी हो, लेकिन सिविल सोसायटी और निजी क्षेत्र भी सक्रिय भूमिका निभाएं। इस स्पष्ट सोच के साथ कि शिक्षा की उत्प्रेरक भूमिका नए भारत को आकार दे सकती है, इसे एक सामाजिक मिशन बनाना पड़ेगा।

मुझे प्रसिद्ध तेलुगु कवि गुरजाड अप्पाराव की पंक्तियां याद आ रही हैं, जिसका आशय यह है कि 'हमारे कदमों के नीचे की धरती देश नहीं है, बल्कि जो इस भूमि पर बसे हैं, वे लोग देश होते हैं।' लोगों के जीवन की गुणवत्ता ही किसी देश का चरित्र बताती है। यह समानता है, जो यह तय करती है कि विकास के सुफल का किस तरह वितरण हुआ? हम समावेशी विकास के प्रति समर्पित देश हैं। हम अपने कार्यक्रम इस तरह गढ़ रहे हैं, जिसमें कोई पीछे न छूट पाए। ऐसे में, यह स्वाभाविक है कि एक सहभागी, जीवंत और अधिक समावेशी लोकतंत्र के निर्माण में साक्षरता पहला जरूरी कदम है।

साक्षरता एक नागरिक को अपने उन अधिकारों के इस्तेमाल में सक्षम बनाती है, जो उसे संविधान से मिले हुए हैं। यह देखा गया है कि गरीबी, शिशु मृत्यु-दर, जनसंख्या-वृद्धि , लैंगिक गैर-बराबरी जैसी समस्याओं से शिक्षित समाज बेहतर तरीके से निपटते हैं। भारतीय परिप्रेक्ष्य में साक्षरता हमारे देश व समाज के वंचित तबकों के सशक्तीकरण और उनके जीवन स्तर को सुधारने में अहम भूमिका निभा सकती है।

सार्वभौमिक साक्षरता के लक्ष्य को हासिल करने के लिए हमें अपनी द्वीपक्षीय रणनीति जारी रखनी पड़ेगी। एक, हमें प्री-प्राइमरी शिक्षा और स्कूली शिक्षा की गुणवत्ता सुधारनी होगी, ताकि हमारे सभी स्नातकों के पास आवश्यक साक्षरता कौशल हो। दूसरी, उन तमाम लोगों को सीखने के अवसर दिए जाने चाहिए, जिन्होंने स्कूल का मुंह नहीं देखा या जिन्हें बीच में किन्हीं वजहों से स्कूल छोड़ना पड़ा। हमें उन नौजवानों व प्रौढ़ों को भी ये मौके देने होंगे, जिन्हें अपनी आजीविका के अवसरों के विस्तार के लिए बुनियादी कौशल हासिल करने की जरूरत है।

संभावित प्रश्न

भारत में शिक्षा के स्टार्ट में सुधार लाने एवं साक्षरता को सभी तक पहुंचाने के लिए हमे नीतिगत परिवर्तन लाने होंगे। इस कथन का विश्लेषण करें।

चीन से चौकन्ना रहने की जरूरत

साभार: दैनिक जागरण
(9 सितंबर, 2017)

ब्रम्ह चेलानी
[लेखक सामरिक मामलों के विश्लेषक हैं]

सार

इस लेख में लेखक ने भारत को डोकलम विवाद के बाद से चीन से सतर्क रहने की सलाह दी है और बताया है कि कैसे चीन भारत के लिए कूटनीतिक व्यवधान पैदा कर रहा है।

विशेष- यह लेख सामान्य अध्ययन प्रश्न पत्र-II (शासन व्यवस्था) के लिए महत्वपूर्ण है।

डोकलाम विवाद सुलझ गया और भारतीय प्रधानमंत्री की चीन यात्र भी संपन्न हो गई, लेकिन इस विवाद से जो नुकसान हुआ उसकी भरपाई आसान नहीं होगी। सीमा, व्यापार, सामुद्रिक और आवाजाही एवं आर्थिक गलियारों को लेकर चीन के साथ उलङो हुए मुद्दे शायद और ज्यादा उलझ जाएंगे। जोखिम यह भी है कि गतिरोध की यह समाप्ति सीमा पर अस्थाई राहत भी हो सकती है और कभी भी टकराव का नया मोर्चा खुल सकता है। बीजिंग ने हमेशा इसी बात पर जोर दिया कि कलाम को लेकर अगर कोई विवाद है भी तो यह उसके और बेहद छोटे से देश भूटान के बीच है। आखिरकार चीन को भारत के साथ समझौता करना पड़ा जिसकी वह इस विवाद में कोई भूमिका मानने को ही तैयार नहीं था।

चीनी कम्युनिस्ट पार्टी और पीपुल्स लिबरेशन आर्मी यानी पीएलए के लिए यह पचाना मुश्किल होगा कि भारत को उकसाने की तमाम कोशिशें करने के बाद वे अपने मकसद में नाकाम रहे और आखिर में चीन को समझौते के लिए मजबूर होना पड़ा। साम्यवादी शासन के तहत चीन का यह रिकॉर्ड रहा है कि वह किसी मोर्चे पर कदम तभी पीछे हटाता है जब उसके दिमाग में किसी नए मोर्चे पर पलटवार की मंशा छिपी हो, फिर भी भारत ने यह साबित कर दिया कि अगर कोई पड़ोसी चीन के खिलाफ मुस्तैदी से खड़ा हो जाए तो उसे पीछे हटाया जा सकता है। भारत से पहले चीन के मामले में जापान भी ऐसा कर चुका है। डोकलाम एक निर्णायक पड़ाव है। दक्षिण चीन सागर में अपने नियंत्रण को बढ़ाने की मुहिम में पहली बार चीन को प्रतिद्वंद्वी देश से ऐसी चुनौती मिली है कि विवादित क्षेत्र में उसे अपने निर्माण कार्य पर विराम लगाकर यथास्थिति बहाल करनी पड़ी।

जब भारत ने यह दिखा दिया कि वह किसी भी सूरत में पीछे नहीं हटेगा तो फिर चीन के पास भारत से वार्ता के जरिये समाधान निकालने के अलावा कोई और विकल्प शेष नहीं रहा। आखिरकार चीन शर्मसार होते हुए इस पर राजी हुआ कि दोनों देश आपसी सहमति से सेनाएं पीछे हटाकर गतिरोध को खत्म करेंगे। इसमें दो कारकों ने बीजिंग को ऐसा करने पर मजबूर कर दिया। एक तो वह शियामेन में 3 से 5 सितंबर के बीच आयोजित ब्रिक्स सम्मेलन को किसी भी सूरत में सफल बनाना चाहता था। इससे भी बढ़कर वह कम्युनिस्ट पार्टी की अहम बैठक से पहले राष्ट्रपति शी चिनफिंग की साख बचाना चाहता था। भले ही चीन सैन्य ताकत के मामले में भारत से कहीं ज्यादा मजबूत हो, लेकिन विवादित त्रिपक्षीय मार्ग पर भौगोलिक हालात को देखते हुए भारत को ही रणनीतिक लाभ हासिल है। ज्यादा से ज्यादा चीन हिमालयी क्षेत्र में पड़ने वाली बेरहम सर्दी की शुरुआत तक इस संघर्ष को खींच सकता था जिससे चीनी पार्टी के सम्मेलन पर संशय के बादल मंडराने लगते।

गतिरोध के लंबा खिंचने से कूटनीतिक स्तर पर चीन को भारी कीमत चुकानी पड़ती, क्योंकि भारत उसके खिलाफ खड़ा होने के तेवर जाहिर कर चुका था और इस तरह एशिया में चीन के उभार से पहले ही ग्रहण लग जाता। क्या डोकलाम समझौते के साथ ही भारत भविष्य में चीन को लेकर निश्चिंत हो गया है या शी ने ऐसे वक्त में भारत पर बड़ी मेहरबानी की जब वह पूरा ध्यान उस पार्टी कांग्रेस पर लगाए हुए है जिसमें उनकी ताजपोशी चीन में माओ के बाद सबसे मजूबत नेता के तौर पर होनी तय मानी जा रही है। इसकी अनदेखी नहीं की जा सकती कि ब्रिक्स एक ऐसा समूह है जिसमें चीन का प्रभाव लगातार बढ़ता जा रहा है। चीन ने एक तो शांघाई स्थित न्यू डेवलपमेंट बैंक की स्थापना की और चीनी वर्चस्व वाले 100 अरब डॉलर के आकस्मिक कोष की स्थापना से वैश्विक नकदी संकट की स्थिति में अपने लिए एक मजबूत रक्षा कवच तैयार कर लिया।

इन दोनों कदमों का सबसे बड़ा लाभ चीन को ही मिलेगा। कलाम मसले पर भारत के रुख और चीन द्वारा उत्पन्न किए रणनीतिक संकट में उसे ही बचकर निकलने देने के भारत के फैसले को देखते हुए ऐसी संभावनाएं कम ही लगती हैं कि चीन बदले में उसे कोई रियायत देने जा रहा है। यह भविष्य में भारत के लिए दु:स्वप्न साबित हो सकता है। चीन भारत के खिलाफ

जंग छेड़ने के बजाय रणनीतिक रूप से इसलिए पीछे हट गया, क्योंकि उसके पास विकल्प खत्म हो रहे थे। अब चीन कलाम का बदला ले सकता है और उसके लिए जगह और वक्त भी अपनी सुविधा के हिसाब से तय करेगा। अगली दफा चीनी सेना यह ध्यान रखेगी कि वह ऐसे किसी इलाके में अतिक्रमण नहीं करे जहां भारतीय सेना का पलड़ा भारी हो। वह ऐसी जगह चुनेगी जहां औचक हमले से भारी नुकसान कर भारतीय सेना को झुकाया जा सके।

जब भारत सीमा पर पहले से ही चीनी सेना की लगातार घुसपैठ की कोशिशों से जूझ रहा है तब हिमालयी क्षेत्र के लिए चौकस निगरानी ही शांति की कुंजी होगी। सेना प्रमुख जनरल बिपिन रावत भी सचेत कर चुके हैं कि भारत संतुष्ट होकर नहीं बैठ सकता, क्योंकि भविष्य में कलाम जैसी घुसपैठ के और मामले सामने आ सकते हैं। भारत के साथ लंबी विवादित सीमा पर अपनी आक्रामकता को जहां चीन पूरी तरह जायज ठहराता है वहीं भारत का रवैया अभी भी प्रतिक्रिया वाला ही बना हुआ है। 1द्विपक्षीय रिश्तों में व्यापक चुनौतियों के तमाम बदरंग पहलू हैं। चीन कानूनी समझौते का मखौल उड़ाने से भी परहेज नहीं करता। तिब्बती क्षेत्र में नदियों के प्रवाह से जुड़ी जानकारी देना उसकी ऐसी ही बाध्यता है जिसका वह पालन नहीं करता।

समझौते के तहत कुछ नदियों को लेकर सालाना आधार पर 15 मई से 15 अक्टूबर के बीच दी जाने वाली जानकारियां न दिए जाने को लेकर चीन ने कोई वजह नहीं बताई है। अगर चीन भारत के स्थान पर होता तो वह बाढ़ और उससे होने वाले जान-माल के नुकसान के लिए भारत द्वारा नदियों के प्रवाह की जानकारी न दिए जाने को जिम्मेदार करार देता, मगर भारत इस पर खामोश ही रहा। लगता है कि ये आंकड़े न दिए जाना इस बात की सजा है कि भारत ने मई में आयोजित वन बेल्ट, वन रोड सम्मेलन का बहिष्कार किया था। जब चीन औपचारिक द्विपक्षीय समझौतों पर अमल नहीं करता तो क्या वह डोकलाम समाधान पर अडिग रहेगा? 2012 में चीन और फिलीपींस विवादित स्कारबोरो शोआल से नौसैनिक जहाज पीछे हटाने पर सहमत हो गए थे। चीन ने असल में जहाज पीछे हटने का आभास ही दिया था ताकि वह वापस लौट कर शोआल को हथिया सके।

आगे भले ही कुछ भी हो, लेकिन कलाम से चीन की अतिक्रमण करने वाली प्रवृत्ति ही जाहिर होती है। चीन के सामने न झुकने और साथ ही साथ शांति के संदेशों के जरिये भारत ने अन्य पड़ोसी देशों के सामने यही मिसाल पेश की है कि चीन की हेकड़ी से कैसे निपटा जा सकता है। 1कलाम से यह एक सवाल भी सामने आता है कि क्या दक्षिण चीन सागर में चीन के सामने अमेरिका ने अड़ने की हिम्मत दिखाई? वहां बनाए गए सात कृत्रिम द्वीप अब पूरी तरह उसके सैन्य अड्ं में तब्दील हो गए हैं। असल में वहां मिली सफलता ने चीन का हौसला बढ़ा दिया है।

संभावित प्रश्न

भारत को चीन से डोकलाम विवाद के बाद से कूटनीतिक एवं सामरिक रूप से सतर्क रहने की आवश्यकता है तथा भारत को अन्य सहयोगी देशों के साथ अपने सामरिक संबंधों को भी मजबूत करने की आवश्यकता है। इस कथन से आप कहाँ तक सहमत हैं? चर्चा करें।